अमृत जयंती समारोह

भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन

संगोष्ठी 11-13 दिसम्बर 1988

अमृत जयंती समारोह स्मारिका

भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन संगोष्ठी

11–13 दिसम्बर 1988

[विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी हेतु राष्ट्रीय संचार परिषद् (एन० सी० एस० टी० सी०) के आर्थिक सहयोग द्वारा प्रकाशित]

सम्पादक

प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव
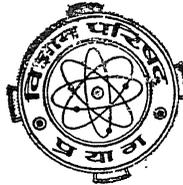
विज्ञान परिषद्, प्रयाग

महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद

डॉ० पूर्णचन्द्र गुप्त
प्रधान मन्त्री
विज्ञान परिषद्, प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद–211002

अमृत जयंती समारोह के अंतर्गत
11–13 दिसम्बर 1988 को विज्ञान परिषद्, प्रयाग
द्वारा आयोजित संगोष्ठी के अवसर पर

विज्ञान एवं तकनीकी हेतु राष्ट्रीय संचार परिषद्
(एन० सी० एस० टी० सी०)
[National Council Of Science
And Technology Communication
(N. C. S. T. C.)]
के आर्थिक सहयोग द्वारा प्रकाशित

मुद्रक

श्री सरयू प्रसाद पाण्डेय
नागरी प्रेस
186, अलोपीबाग
इलाहाबाद

अपनी बात

'विज्ञान परिषद्, प्रयाग' अपने जन्म के प्रारम्भ से ही विज्ञान लेखन के क्षेत्र में आनेवाली समस्याओं के प्रति जागरूक रही है। यह अपनी मासिक पत्रिका 'विज्ञान' के माध्यम से सदैव ही अपने समय की विज्ञान-संबंधी खोजों को रोचक शैली में जन-जन तक पहुँचाने का काम करती आई है; विज्ञान के प्रचार-प्रसार में अवरोध उत्पन्न करने वाली समस्याओं को न केवल रेखांकित करती रही है, वरन् समय-समय पर उनके समाधान भी सुझाती रही है। यह कार्य परिषद् पिछले पचहत्तर वर्षों से निरन्तर करती आ रही है। किन्तु यह अजीब बात है कि सारे प्रयत्नों के बावजूद परिषद् को अपेक्षित सफलता नहीं मिली। इसे हमने केवल महसूस ही नहीं किया बल्कि बार-बार दोहराया भी है।

वांछित सफलता न मिलने का एक बड़ा कारण यह है कि अपना देश एक विशाल देश है। इस देश में अनेक भाषाएँ बोलने और लिखने वाले प्रदेश हैं जिसके कारण एक क्षेत्र विशेष में रचे गए वैज्ञानिक साहित्य का लाभ दूसरे क्षेत्रों या प्रदेशों को नहीं मिल पाता। एक दूसरे की भाषा न समझ पाने के कारण सम्पर्क में भी कठिनाई होती है। अतएव परिषद् ने इसे न केवल गहराई से अनुभव किया वरन् भारत की विभिन्न भाषाओं के विज्ञान-लेखकों को एक मंच पर लाने के लिए भी यह कृतसंकल्प हुई। सभी भारतीय भाषाओं के विज्ञान-लेखक एक मंच पर आकर अपनी-अपनी भाषाओं के विज्ञान साहित्य के सृजन में जो समस्यायें आती हैं, जो अवरोध उत्पन्न होते हैं, उनके विषय में मिल बैठकर चर्चा करें और समाधान ढूंढें, यही इस त्रिदिवसीय संगोष्ठी के आयोजन का उद्देश्य है।

हम अपने उद्देश्य में कहाँ तक सफल होते हैं यह तो इस संगोष्ठी के सम्पन्न होने के बाद ही ज्ञात होगा पर राष्ट्रभाषा हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं के विज्ञान लेखकों, सम्पादकों और विज्ञान संस्थाओं के पदाधिकारियों ने जिस प्रकार रुचि दिखलाई है, इससे हमें इस संगोष्ठी की सफलता में कोई संदेह नहीं है।

आपसी सम्पर्क और एक दूसरे को समझने, समस्याओं को रेखांकित करने तथा उनका समाधान ढूंढने में यह संगोष्ठी निश्चित रूप से मील का पत्थर सिद्ध होगी।

हमें यह स्वीकार करने में तनिक भी हिचक नहीं है कि 'विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी हेतु राष्ट्रीय संचार परिषद् (एन सी एस टी सी) के आर्थिक सहयोग के बिना इस गोष्ठी को आयोजित कर सकना हमारे लिए कदापि संभव नहीं था। विज्ञान परिषद् की अपनी सीमायें हैं, सीमित साधन हैं। अतएव मैं विज्ञान परिषद् की ओर से एन सी एस टी सी को 80,000 (अस्सी हज़ार) रुपयों के आर्थिक सहयोग के लिये कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

मैं उन सभी विज्ञान सेवियों का हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने अपने आने की सूचना भेजकर हमारा उत्साह बढ़ाया है। वे सभी लेखक साधुवाद के पात्र हैं जिन्होंने अग्रिम रूप से अपने आलेख, आलेखों के सारांश और विज्ञान परिषद् से सम्बन्धित अपने संस्मरण भेजे हैं। जिन विद्वत्जनों ने स्मारिका के लिए मुझे लेखकीय सहयोग दिया है, उनके प्रति मैं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

इस स्मारिका के माध्यम से आपको विज्ञान परिषद् की गतिविधियों की एक झलक अवश्य मिलेगी। स्मारिका के प्रकाशन में विज्ञान परिषद् की कार्यकारिणी और परिषद् परिवार के समस्त सदस्यों से मुझे जो सहयोग मिला है उसी के फलस्वरूप इस स्मारिका को आप सब के सम्मुख प्रस्तुत कर पाना सम्भव हुआ है। अत्यन्त ही अल्प समय में इसे नागरी प्रेस ने मुद्रित किया, इसके लिये प्रेस के संचालक श्री सरयू प्रसाद पाण्डेय जी का मैं आभारी हूँ।

यदि इस त्रिदिवसीय संगोष्ठी से समस्यायें रेखांकित हो सकीं, और उनके समाधान ढूंढे जा सके तो हम अपना प्रयास सफल समझेंगे। यह गोष्ठी विज्ञान लेखन संबंधी समस्याओं के समाधान की इति नहीं शुभारंभ है। और विज्ञान परिषद् के अमृत जयन्ती वर्ष के कार्यक्रमों की सार्थकता भी इसी में है।

एक बार पुनः सभी के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करते हुए······

—प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

खण्ड 1

परिषद् का परिचय

विज्ञान परिषद् प्रयाग : एक परिचय

अनिल कुमार शुक्ल

संयुक्त मंत्री, विज्ञान परिषद्, प्रयाग

पचहत्तर साल पूर्व 10 मार्च 1913 को म्योर सेन्ट्रर कॉलेज (इलाहाबाद विश्वविद्यालय) के चार अध्यापकों ने मिलकर भारतीय भाषाओं में विज्ञान के प्रचार-प्रसार के पावन उद्देश्य से इलाहाबाद में "वर्नाक्यूलर साइंटिफिक लिटरेचर सोसाइटी" की स्थापना का निश्चय किया था। संस्था का नाम डॉ० गंगानाथ झा ने "विज्ञान परिषद्", प्रस्तावित किया और प्रोफेसर हमीदउद्दीन साहेब ने "अंजुमन-अनाअ-व-फनून" सुझाया। कालांतर में यह संस्था "विज्ञान परिषद्, प्रयाग" के नाम से ही यशस्वी हुई। विज्ञान परिषद्, प्रयाग के ये चारों आदि पुरुष अपने-अपने विषयों के प्रतिष्ठित विद्वान थे। डॉ० गंगानाथ झा व प्रोफेसर हमीदउद्दीन साहेब विश्वविद्यालय में क्रमशः संस्कृत और अरबी पढ़ाते थे, जबकि बाबू रामदास गौड़ तथा श्री सालिगराम भार्गव जी के विषय क्रमशः रसायनशास्त्र और भौतिकविज्ञान थे। अलग-अलग भाषाओं और विषयों की पृष्ठभूमि वाले इन चार विद्वतजनों का यह अनोखा संगम भारतीय भाषा-भाषियों के, विशेषकर हिन्दी के, लिये तो वरदान ही साबित हुआ। गुलाम भारत में एक ऐसी संस्था का जन्म हुआ, जिसने दुनिया भर का वैज्ञानिक ज्ञान देश की जनता को देश की भाषा में उपलब्ध कराने का बीड़ा उठाया।

दरअसल, बीसवीं सदी के शुरूआती दशक भारत में राष्ट्रीय चेतना के उफान के वर्ष थे। गुलामी की जंजीरों को तोड़ फेंकने की बेचैनी अनेक रूपों में प्रकट हुई। राजनीतिक क्षेत्रों में स्वशासन व स्वतंत्रता की आवाज़ परवान चढ़ी तो आर्थिक क्षेत्र में स्वदेशी वस्तुओं का बाजार गर्म हुआ। शिक्षा के क्षेत्र में नवीनतम वैज्ञानिक ज्ञान का अभिज्ञान आवश्यक समझा जाने लगा, परन्तु हमारे राष्ट्रनायकों ने इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये स्वभाषा के महत्व को स्पष्ट तौर पर समझ लिया था। इस प्रकार अपनी भाषा में सारी दुनिया का आधुनिक ज्ञान-विज्ञान उपलब्ध कराने के लिये सारे देश में अनेक संस्थाओं का जन्म हुआ। "विज्ञान परिषद्, प्रयाग" की स्थापना भी इसी राष्ट्रीय भावना से हुई। यद्यपि इस संस्था के जन्म से पूर्व भी कतिपय हिन्दी प्रेमी संस्थायें व व्यक्ति अपनी-अपनी क्षमतानुसार माँ भारती का कोष भरने का प्रयास कर रहे थे, परन्तु परिषद् की स्थापना से उन छिटपुट प्रयासों को एक संगठित मंच मिल गया। वस्तुतः परिषद् की स्थापना देशी भाषाओं में वैज्ञानिक साहित्य की रचना और प्रचार का काम सुसंगठित रूप से चलाने के उद्देश्य से ही हुई थी। परिषद् का पहला औपचारिक अधिवेशन 31 मार्च 1913 को हुआ। प्रो० हमीदउद्दीन साहब को सदस्य संख्या बढ़ाने हेतु पत्रव्यवहार करने का दायित्व सौंपा

गया और वैज्ञानिक विषयों पर कुछ आरंभिक ग्रन्थों के प्रणयन का निश्चय किया गया। संस्था का दूसरा अधिवेशन भी इसी वर्ष 30 जुलाई 1913 ई० को आयोजित हुआ था।

अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये परिषद् ने प्रारम्भ से ही प्रकाशन-कार्य को प्राथमिकता दी। पुस्तकों के प्रकाशन के साथ-साथ हिन्दी व उर्दू में पत्रिका के प्रकाशन का भी निश्चय हुआ। समय-समय पर अधिकारी विद्वानों के लोकप्रिय व्याख्यानों के आयोजन को भी महत्व दिया गया। राष्ट्रीय महत्व के समकालीन विषयों पर अखिल भारतीय गोष्ठियों के माध्यम से जनजागरण का प्रयास भी फलीभूत हुआ। आज, जबकि यह संस्था अपनी स्थापना के गौरवशाली 75 वर्ष पूरे कर चुकी है, इसकी उपलब्धियों एवं कमियों के ऐतिहासिक रेखांकन (मूल्यांकन) का समय आ गया है। 'विज्ञान परिषद्, प्रयाग' के 'अमृत जयन्ती वर्ष' के उपलक्ष्य में प्रस्तुत यह आलेख, परिषद् की विभिन्न गतिविधियों से देश की जनता को वाकिफ कराने का एक विनम्र प्रयास है।

हिन्दी में वैज्ञानिक पुस्तकों का प्रकाशन : विज्ञान परिषद् के गठन से पूर्व नागरी प्रचारिणी सभा, काशी और गुरुकुल काँगड़ी, हरिद्वार जैसी संस्थाओं तथा श्री सुधाकर उपाध्याय एवं श्री लक्ष्मी नारायण मिश्र प्रभृत लोगों ने यदा-कदा विज्ञान विषयक पुस्तकें हिन्दी में लिखने-लिखाने का प्रयास किया था। परन्तु इस कार्य को आवश्यक गति न मिल सकी थी। परिषद् की स्थापना ने इस कार्य में आनेवाली कठिनाइयों के त्वरित समाधान हेतु एक उपयुक्त मंच की भूमिका निभाई। परिषद् की स्थापना के ही वर्ष 1913 ई० के ग्रीष्मावकाश में बाबू रामदास गौढ़ व श्री सालिगराम भार्गव जी ने मिलकर 'विज्ञान प्रवेशिका, भाग–1' की रचना कर डाली। धनाभाव के बावजूद किसी प्रकार यह पुस्तक प्रकाशित कर दी गयी। हिन्दीजगत् ने खुलेदिल से इसका स्वागत किया और पुस्तक का पहला संस्करण हाथों-हाथ बिक गया। प्रो० सैयद मोहम्मद अली नामी के प्रयत्न से, इस पुस्तक का उर्दू अनुवाद भी कालान्तर में प्रकाशित हुआ। तब से लेकर 1947 ई० तक परिषद् ने कुल साठ पुस्तकें छापीं। इसके बाद पुस्तकों के प्रकाशन की गति मन्द होते होते रुक-सी गयी। इसके कई कारण थे।

आजादी की प्राप्ति होते ही सारी आशाएँ नई राष्ट्रीय सरकार में केन्द्रित हो गयी थीं। लम्बी लड़ाई के बाद हुई फतह से आम जनता आत्मविभोर हो गई थी। राष्ट्रीयता के ज्वार को उबाल देने वाली संस्थाएँ भी, अपना काम समाप्त जान ठण्डी पड़ने लगी थीं। विज्ञान परिषद् भी इस व्यामोह से अछूती न रह सकी। साथ ही, परिषद् के कर्णधारों ने सोचा कि देश में शिक्षा का माध्यम अब भारतीय भाषाएँ हो जाएँगी और इस प्रकार देशी भाषाओं में विज्ञान विषयक पुस्तकों की माँग बढ़ने से, निजी प्रकाशक भी स्वयं आगे आएँगे। अत: परिषद् ने अपना ध्यान पुस्तक प्रकाशन की ओर से हटाकर, उत्कृष्ट पुस्तकों के मूल्याकन एवं 'विज्ञान' (मासिक) के साथ-साथ हिन्दी में एक वैज्ञानिक शोध पत्रिका निकालने की तरफ केन्द्रित किया।

'विज्ञान' मासिक पत्रिका का प्रकाशन : पुस्तकों के प्रकाशन के साथ-साथ परिषद् के संस्थापकों ने देशी भाषाओं में लेखक तैयार करने व संस्था के उद्देश्यों के प्रचार के लिए

हिन्दी व उर्दू में पत्रिका के प्रकाशन का भी निश्चय किया था। यह निश्चय परिषद् की स्थापना की दूसरी सालगिरह के अवसर पर फलीभूत हुआ और परिषद् की पत्रिका 'विज्ञान' का पहला अंक, अप्रैल 1915 में प्रकाशित हुआ। किसी भी भारतीय भाषा में छपने वाली, यह विज्ञान-विषयक पहली मासिक पत्रिका थी। 'विज्ञान' पत्रिका को उर्दू में भी छापने की योजना थी, पर उसके लिए आवश्यक 250 स्थायी ग्राहक न मिल सके और यह योजना कामयाब न हो सकी। 'विज्ञान' पत्रिका के 48 पृष्ठों की सामग्री जुटाने का जिम्मा बाबू रामदास गौड़ जी का था, जबकि भाषा सम्पादन का काम लाला सीताराम एवं प्रसिद्ध हिन्दी कवि पं० श्रीधर पाठक करते थे। अपने दो वर्षों के सम्पादन काल में श्रीधर पाठक जी 'मंगलाचरण' शीर्षक से 'विज्ञान' के पहले पृष्ठ पर कविता में ही सम्पादकीय टिप्पणियाँ लिखा करते थे।

'विज्ञान' पत्रिका के पहले 12 अंक, लीडर प्रेस के मैनेजर श्री कर्मराज भल्ला ने छापे, परन्तु लगातार हो रहे घाटे के कारण उन्होंने अपनी असमर्थता जता दी। मजबूर होकर परिषद् के कर्णधारों को यह दायित्व भी सम्भालना पड़ा। 'विज्ञान' का प्रकाशन एक मौलिक व चुनौती पूर्ण काम तो था, पर सौदा घाटे का था। वैज्ञानिक शब्दावली के अभाव और किसी भी प्रकार के पारिश्रमिक या मानदेय के बिना, परिषद् के सदस्यों, पदाधिकारियों, लेखकों व सम्पादकों ने जिस लगन व परिश्रम से इस चुनौती का सफलतापूर्वक सामना किया, वह उनकी देशभक्ति एवं भाषा प्रेम का प्रमाण है। आजकल के घोर व्यावसायिक माहौल में भी 'विज्ञान' पत्रिका ज़िन्दा है तो इसका श्रेय उन हिन्दी सेवी लेखकों को है, जो पारिश्रमिक की परवाह किये बिना अपने उत्कृष्ट लेख सहर्ष भेजते रहते हैं।

यों तो आजकल के हिन्दी साहित्यकार, विज्ञान लेखकों को 'अछूत' मानने के आदी हो चुके हैं, परन्तु 'विज्ञान परिषद्, प्रयाग' पर अनेक पुराने साहित्यकारों की कृपादृष्टि थी। 'सरस्वती' के अंकों में 'विज्ञान' पत्रिका के बारे में टिप्पणियाँ छपा करती थीं और जयशंकर प्रसाद, महाकवि हरिऔध, राष्ट्रीय कवि मैथिलीशरण गुप्त तथा हरिवंश राय बच्चन जी का भी विशेप स्नेह था। प्रसिद्ध हिन्दी कवि पं० श्रीधर पाठक तो 'विज्ञान' पत्रिका के आदि सम्पादक ही थे। उस समय के हिन्दी साहित्यकार 'विज्ञान' पत्रिका न केवल पढ़ते थे वरन् उस पर सहर्ष टिप्पणियाँ भी भेजते थे। हरिऔध जी ने 'विज्ञान' पत्रिका के बारे में लिखा था—

'उदित दिवाकर सदृश हो, हरे देश अज्ञान।
विज्ञ बनावे लोक को विज्ञार्जित 'विज्ञान'।।'

त्रैमासिक शोधपत्रिका का प्रकाशन ; भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक विषयों संबंधी शोध सामग्री के प्रकाशन की दयनीयता की तरफ परिषद् के कर्णधारों का ध्यान था, पर यह योजना विभिन्न कारणों से 1958 ई० के पूर्व फलीभूत न हो सकी। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के जयपुर अधिवेशन के अन्तर्गत 1944 ई० में आयोजित 'विज्ञान परिषद्' का अध्यक्षीय भाषण देते हुए डॉ० सत्यप्रकाश ने हिन्दी में एक अनुसंधान पत्रिका के प्रकाशन की आवश्यकता पर बल दिया था। तभी से विज्ञान परिषद्, प्रयाग के तत्वावधान में

डॉ० सत्यप्रकाश व अन्य हिन्दी प्रेमियों ने अपने प्रयास शुरू किये। अनेक आक्षेपों व दुराशाओं से जूझते हुए 1958 में यह तपस्या फलीभूत हुई। प्रो० जे० बी० एस० हाल्डेन के आशीर्वाद व प्रेरणा से 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' का पहला अंक जनवरी 1958 ई० का छपा। तब से अब तक इस त्रैमासिक शोधपत्रिका ने अपने जीवन के तीन गौरवपूर्ण दशक पूरे किये हैं। डॉ० सत्यप्रकाश जी के सम्पादन एवं दिशानिर्देशन में प्रकाशित इस शोध पत्रिका के विनिमय में 50 से भी अधिक विदेशी शोध पत्रिकाएँ परिषद् को प्राप्त होती है। विनिमय में प्राप्त इन शोधपत्रिकाओं के जिल्द बँधे समस्त अंक परिषद् के पुस्तकालय में शोधार्थियों के उपयोगार्थ उपलब्ध हैं।

हिन्दी ही नहीं, वरन किसी भी भारतीय भाषा में पिछले तीस साल से निरन्तर प्रकाशित इस एकमात्र वैज्ञानिक शोधपत्रिका के प्रकाशन में डॉ० सत्यप्रकाश जी के साथ-साथ डॉ० शिवगोपाल मिश्र का भी अन्यतम योगदान है। 1958 ई० से पत्रिका के प्रबंध सम्पादक के रूप में जुड़े डॉ० मिश्र की विज्ञान सेवा और हिन्दी निष्ठा की जितनी ही प्रशंसा की जाय, कम है। 1971 ई० में सत्यप्रकाश जी के संन्यास ग्रहण के अनन्तर तो इस शोधपत्रिका के सम्पादन एवं प्रकाशन का सम्पूर्ण दायित्व व्यवहारतः डॉ० मिश्र ही वहन कर रहे हैं। निःस्वार्थ हिन्दी सेवा और विज्ञान प्रेम की यह अजस्र धारा ही, वस्तुतः परिषद् का संबल है, अन्यथा आर्थिक झंझावातों एवं निराशा के काले क्षणों ने, इसे कब का निगल लिया होता।

वैज्ञानिक व्याख्यान एवं गोष्ठियाँ—पत्रिका एवं पुस्तकों के प्रकाशन के साथ-साथ समसामयिक वैज्ञानिक विषयों पर लोकोपयोगी व्याख्यानों का आयोजन भी परिषद् द्वारा किया जाता है। परिषद् द्वारा आयोजित प्रथम व्याख्यान म्योर कॉलेज के प्रिंसिपल जेनिंग्स की अध्यक्षता में महावीर प्रसाद श्रीवास्तव ने दिया था। व्याख्यान का विषय था—"आर्किमिडीज का सिद्धान्त"। समय-समय पर आयोजित किये जाने वाले इन जनोपयोगी व्याख्यानों के अलावा, भारतीय विज्ञान कांग्रेस की पूर्वसन्ध्या पर, हर साल एक विशेष व्याख्यान "विज्ञान परिषद् अनुसंधान गोष्ठी" के अन्तर्गत आयोजित किया जाता है। विज्ञान कांग्रेस अधिवेशन स्थल पर आयोजित होने वाले इस व्याख्यान के निमित्त किसी राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक को आमंत्रित किया जाता है। इन उच्चस्तरीय शोध-व्याख्यानों की विशेषता इनका हिन्दी में दिया जाना है। विज्ञान कांग्रेस के अधिवेशन स्थल पर हिन्दी में इन शोध व्याख्यानों का आयोजन कर विज्ञान परिषद् ने "इंडियन साइंस कांग्रेस एसोसिएशन" और अन्य अंग्रेज़ीपरस्त लोगों के सामने यह सिद्ध कर दिया है कि शोध व्याख्यानों को अभिव्यक्त करने में हिन्दी पूर्णतया समर्थ है। उल्लेखनीय है कि इस वर्ष 1988 की "विज्ञान परिषद् अनुसंधान गोष्ठी" का अध्यक्षीय शोधव्याख्यान राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला के निदेशक डॉ० श्रीकृष्ण जोशी ने 'भौतिकी में इस दशक का आश्चर्य-जनक अन्वेषण (अतिचालकता)' विषय पर 6 जनवरी को पुणे में दिया था।

अपने अमृत जयंती वर्ष 1988 में दो नियमित व्याख्यान मालाएँ शुरू की जा रही हैं। पहली व्याख्यान माला सी० एस० आई० आर० के भूतपूर्व महानिदेशक डॉ० आत्माराम की स्मृति में प्रति वर्ष आयोजित होगी। इस व्याख्यानमाला के अन्तर्गत भारत में वैज्ञानिक

विकास की परम्परा, भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन एवं मानवीय मूल्य। की विभाग जैसे विषयों पर सुप्रसिद्ध विद्वानों के व्याख्यान होंगे। इस व्याख्यानमाला का प्रथम व्याख्यान राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला नयी दिल्ली के व्याख्यान कक्ष में स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती ने 10 मार्च 1988 को दिया। व्याख्यान का विषय था—'डॉ० आत्माराम और उनका व्यक्तित्व'। दूसरी व्याख्यानमाला परिषद् के चार संस्थापकों में से एक, श्री सालिगराम जी भार्गव की स्मृति में भौतिक विज्ञान पर केन्द्रित होगी। इन दोनों ही व्याख्यान मालाओं के लिये परिषद् को कुछ राशि दान में प्राप्त हुई है। इस धनराशि के ब्याज से व्याख्यान-दाताओं को मानदेय एवं मार्गव्यय का प्रबन्ध किया जायगा और समय-समय पर इन व्याख्यानों का संकलन पुस्तकाकार प्रकाशित भी किया जायगा।

इन लोकप्रिय व्याख्यानों के अलावा परिषद् द्वारा समय-समय पर अखिल भारतीय गोष्ठियों का आयोजन भी किया जाता है। पिछले पांच वर्षों में हिन्दी माध्यम से तीन राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ आयोजित की गयीं। 1983 की संगोष्ठी का विषय था—'वैज्ञानिक अभिरुचि—वैज्ञानिक समितियों की भूमिका'। वर्ष 1986 की गोष्ठी 'पर्यावरण 2001' हिन्दी में अपनी तरह का पहला आयोजन था। इसी कड़ी में 'विज्ञान तकनीकी और पर्यावरण 2001' शीर्षक से एक अन्य राष्ट्रीय गोष्ठी 1987 में आयोजित की गयी। हिन्दी माध्यम से विज्ञान परिषद् द्वारा आयोजित की जाने वाली इन राष्ट्रीय गोष्ठियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन गोष्ठियों के प्रतिभागी परिषद् से मार्गव्यय आदि की अपेक्षा किये बिना अपना योगदान देते हैं। ऐसे हिन्दी प्रेमी वैज्ञानिकों एवं विज्ञान प्रेमियों के कारण ही परिषद् अभी भी अस्तित्वमान है।

अमृत जयंती वर्ष के कार्यक्रमों की शृंखला में इस वर्ष एक विशेष गोष्ठी 'भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन' विषय पर इलाहाबाद में 11-12-13 दिसम्बर को की गयी। इस वृहद् गोष्ठी एवं कार्यशाला में सभी संविधान सम्मत भारतीय भाषाओं के विज्ञान लेखकों, सम्पादकों तथा वैज्ञानिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों को आमन्त्रित किया गया। विभिन्न भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन की उपलब्धियों तथा समस्याओं पर विचार-विमर्श के लिए एक मंच उपलब्ध कराना ही इस गोष्ठी का लक्ष्य है। अतः 'विज्ञान परिषद् प्रयाग' के अमृत जयंती वर्ष के मुख्य समारोह के रूप में आयोजित इस त्रिदिवसीय संगोष्ठी को **अखिल भारतीय विज्ञान लेखक कांग्रेस** का रूप देने का प्रस्ताव भी है।

प्रोत्साहन एवं पुरस्कार योजनाएं—गोष्ठी, व्याख्यान एवं पुस्तक-पत्रिका प्रकाशन सम्बन्धी इन सृजनात्मक प्रयासों के माध्यम से देश में वैज्ञानिक मनोवृत्ति के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ "विज्ञान परिषद्, प्रयाग" देशी भाषाओं में विज्ञान लेखन में लगे भाषाप्रेमियों के समुचित समादर के प्रति भी सतत जागरूक है। इस क्रम में परिषद् ने राष्ट्रभाषा हिन्दी के माध्यम से दीर्घकाल तक विज्ञान-लेखन या सम्पादन करने वाले 26 विज्ञान सेवियों को सम्मानित किया है।

इसके अतिरिक्त दो अन्य पुरस्कार योजनायें भी हैं। पहली योजना "डॉ० गोरख-प्रसाद विज्ञान पुरस्कार" की है। यह पुरस्कार "विज्ञान" मासिक में प्रकाशित तीन सर्वोत्कृष्ट लेखों पर प्रतिवर्ष नये लेखकों को दिया जाता है। इसी प्रकार "विज्ञान परिषद्

अनुसन्धान पत्रिका' में प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ हिन्दी शोध पत्र पर हर दूसरे साल "डॉ० रत्नकुमारी स्वर्णपदक" दिये जाने का प्राविधान है। 1970 के पूर्व अनेक वर्षों तक स्वामी हरिशरणानन्द जी द्वारा दिये जाने वाले अनुदान से उनके नाम पर बालोपयोगी साहित्य, जनोपयोगी साहित्य और उच्चतर साहित्य के अन्तर्गत उत्कृष्ट वैज्ञानिक-पुस्तकों पर प्रति वर्ष तीन पुरस्कार दिये जाते रहे। परन्तु स्वामी हरिशरणनन्द जी के असामयिक निधन से धनाभाव में यह योजना जारी न रखी जा सकी।

परिषद् का भवन—इलाहाबाद विश्वविद्यालय के विज्ञान संकाय परिसर में करीब चार एकड़ भूमि पर परिषद् का अपना विशाल दुमंज़िला भवन है। इस भवन का शिलान्यास पं० जवाहर लाल नेहरू ने 4 अप्रैल 1956 को किया था। दयालु दानदाताओं के सहयोग से उस भवन में चार वृहद कक्ष निर्मित हुए हैं, जिनमें परिषद् के कार्यालय व पुस्तकालय अवस्थित हैं। इसके अलावा अधोतल (Underground) में तीन विशाल गोदाम एवं एक व्याख्यानशाला भी है। व्याख्यानशाला में लगभग चार सौ लोगों के बैठने की व्यवस्था है।

पिछले अनेक वर्षों से परिषद् में एक अतिथिगृह की आवश्यकता महसूस की जा रही थी। एतदर्थ परिषद् के प्रयास इस अमृत जयन्ती वर्ष में सफलीभूत हुए हैं। विज्ञान-परिषद्व के भूतपूर्व सभापति एवं प्रसिद्ध रसायनवेत्ता स्वामी डॉ० सत्यप्रकाश जी के शिष्यों द्वारा उदारतापूर्वक दी गई सहायता से एक अत्याधुनिक अतिथिगृह का निर्माण कराया गया है। यह अतिथिगृह स्वामी सत्यप्रकाश जी तथा अन्य माननीय अतिथियों द्वारा आवश्यकतानुसार उपयोग में लाया जाएगा।

पचहत्तर वर्षों का मूल्यांकन : भारतीय भाषाओं के माध्यम से विज्ञान के प्रचार-प्रसार के लिए स्थापित देश की सबसे पुरानी संस्था 'विज्ञान परिषद्, प्रयाग' का ऐतिहासिक महत्व है। स्वाधीनता के दौर में उपजे अनेक सामाजिक व साहित्यिक आन्दोलन अपनी मौत मर चुके हैं। उस दौर की शायद ही कोई पत्रिका जीवित बची है। सुप्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका 'सरस्वती' परिषद् के वर्तमान भवन के ही बगल में स्थित इंडियन प्रेस से निकला करती थी। परन्तु न तो 'सरस्वती' रही और न वह इंडियन प्रेस ही रहा। परन्तु 'विज्ञान' 1915 ई० से अब तक निरन्तर छप रही है। यह एक उल्लेखनीय उपलब्धि तो है पर मार्ग कंटकाकीर्ण रहा है और भविष्य भी बहुत उज्जवल नहीं दिखता है। बारह हजार रुपये सालाना के सरकारी अनुदान एवं परिषद् के पदाधिकारियों के निःस्वार्थ सेवा भाव के भरोसे कब तक छपेगी 'विज्ञान'।

वस्तुतः किसी भी संस्था की सक्रियता एवं उपादेयता का सबसे बड़ा प्रमाण उसकी सदस्य संख्या हुआ करती है, परन्तु इस मामले में परिषद् बहुत भाग्यशाली नहीं रही है। हिन्दी में विज्ञान लेखन एवं प्रकाशन के क्षेत्र में अग्रगामी एवं उल्लेखनीय काम करने के बावजूद उसकी सदस्य संख्या बहुत सीमित रही है। अतः 'विज्ञान परिषद्, प्रयाग' ने अपने अमृत जयन्ती वर्ष में केवल एक सौ एक रुपये की राशि लेकर दो हज़ार आजीवन सभ्य बनाने का संकल्प लिया है। परिषद् के आजीवन सभ्यों को 'विज्ञान' पत्रिका उनके जीवन-पर्यन्त मिलती रहती है और परिषद् के वार्षिक निर्वाचनों तथा कार्यक्रमों में भाग लेने का

अधिकारी भी उन्हें होता है। परिषद् को विश्वास है कि 80 करोड़ की जनसंख्या वाले देश में एक सौ रुपये की अल्पराशि देकर आजीवन सभ्य बनने की चाह रखने वाले हिन्दी विज्ञान प्रेमियों की कमी नहीं पड़ेगी। आखिर ऐसे ही प्रेमी जनों के सहयोग एवं समर्थन से परिषद् पिछले 75 वर्षों से हिन्दी क्षेत्र की जनता को वैज्ञानिक ज्ञान उपलब्ध कराने का अपना व्रत पालती आ रही है। आशा है, 'विज्ञान परिषद, प्रयाग' का अमृत जयन्ती वर्ष, हिन्दी प्रेमी जनता के सहयोगरूपी 'अमृत-पान' का वर्ष होगा। □□

विज्ञान परिषद्, प्रयाग

सभापति

	नाम	कार्यकाल
1.	डॉ० सर सुन्दर लाल	1913-1917
2.	सर राजा रामपाल सिंह	1917-1920
3.	डॉ० एनी बेसेन्ट	1920-1921
4.	जस्टिस गोकुल प्रसाद	1921-1922
5.	डॉ० सर सी० वाई० चिन्तामणि	1922-1925
6.	बाबू शिवप्रसाद गुप्त	1925-1927
7.	डॉ० सर गंगानाथ झा	1927-1930
8.	डॉ० नीलरत्न धर	1930-1933
9.	डॉ० गणेश प्रसाद	1933-1935
10.	डॉ० कर्मनारायण बहल	1935-1938
11.	प्रो० फूलदेव सहाय वर्मा	1938-1940
12.	डॉ० गोरख प्रसाद	1940-1943
13.	डॉ० श्री रंजन	1943-1946
14.	जस्टिस हरिश्चन्द्र	1947-1951
15.	श्री हीरालाल खन्ना	1951-1957
16.	श्री केशवदेव मालवीय	1957-1960
17.	डॉ० सत्यप्रकाश	1960-1967
18.	डॉ० रामधर मिश्र	1967-1969
19.	डॉ० बाबूराम सक्सेना	1969-1975
20.	श्री राम सहाय	1975-1977
21.	प्रो० कृष्ण जी	1977-1979
22.	डॉ० रामचरण मेहरोत्रा	1979-1982
23.	डॉ० गोविन्द राम तोशनीवाल	1982-1984
24.	डॉ० रामदास तिवारी	1984-1987
25.	डॉ० यशपाल	1987-अब तक

विज्ञान परिषद्, प्रयाग

प्रधानमंत्री

नाम	कार्यकाल
1. प्रो० हमीदउद्दीन साहब	1913-1914
2. रायबहादुर लाला सीताराम	1914-1915
3. बाबू रामदास गौड़	1915-1916
4. प्रो० सतीश चन्द्र देव	1916-1926
5. बाबू श्यामसुन्दर दास	1926-1927
6. प्रो० सामिगराम भार्गव	1927-1935
7. डॉ० गोरख प्रसाद	1935-1940
8. श्रीमहावीर प्रसाद श्रीवास्तव	1940-1946
9. डॉ० हीरालाल दुबे	1948-1949
10. डॉ० रामदास तिवारी	1949-1957
11. श्री धर्मेन्द्र नाथ वर्मा	1957-1959
12. डॉ० रमेशचन्द्र कपूर	1959-1962
13. श्री नारायण सिंह परिहार	1962-1964
14. डॉ० बल्देव बिहारी सक्सेना	1964-1966
15. डॉ० हीरालाल निगम	1966-1969
16. प्रो० वाचस्पति	1969-1972
17. प्रो० कृष्ण जी	1972-1977
18. डॉ० शिवगोपाल मिश्र	1977-1987
19. डॉ० पूर्णचन्द्र गुप्त	1987-अब तक

विज्ञान परिषद्, प्रयाग

'विज्ञान' के सम्पादक

	नाम	कार्यकाल
1.	श्रीधर पाठक तथा लाला सीताराम	1915–1917
2.	प्रो० गोपाल स्वरूप भार्गव	1917–1926
3.	प्रो० ब्रजराज	1726–1930
4.	डॉ० सत्यप्रकाश तथा प्रो० ब्रजराज	1927–1933
5.	श्री रामदास गौड़	1933–1937
6.	डॉ० सत्यप्रकाश	1937–1941
7.	डॉ० गोरख प्रसाद	1941–1944
8.	डॉ० सन्त प्रसाद टण्डन	1944–1946
9.	डॉ० रामचरण मेहरोत्रा	1947–1949
10.	डॉ० हीरालाल निगम	1950–1956
11.	डॉ० देवेन्द्र शर्मा	1956–1959
12.	डॉ० शिवगोपाल मिश्र	1959–1971
13.	डॉ० हरिमोहन	1971–1973
14.	डॉ० शिवप्रकाश	1973–1979
15.	डॉ० जगदीश सिंह चौहान	1979–1987
16.	श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव	1987–अब तक

परिषद् द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की सूची

1.	विज्ञान प्रवेशिका भाग 1,	रामदास गौड़ तथा सालिगराम भार्गव, 1914	4 आना
2.	विज्ञान प्रवेशिका भाग 2*	महावीर प्रसाद श्रीवास्तव 1917	1 रु०
3.	मिफ्ताहउल-फनून	अनु० सैयद मोहम्मद अली नामी 1915	4 आना
4.	ताप	प्रेमबल्लभ जोशी 1915	6 आना
5.	हरारत	अनु० प्रो० मेंहदी हुसेन नासिरी 1916	4 आना
6.	पशु पक्षियों का शृंगार	सालिगराम वर्मा 1917	1 आना
7.	केला	गंगाशंकर पंचौली 1917	1 आना
8.	सुवर्णकारी	गंगाशंकर पंचौली 1917	4 आना
9.	चुम्बक	सालिग राम भार्गव 1917	5 आना

10. गुरुदेव के साथ यात्रा अनु० महावीर प्रसाद श्रीवास्तव 1917 5 आना

11. क्षय रोग अनु० महावीर प्रसाद श्रीवास्तव 1917 1 आना

12. दियासलाई और फास्फोरस रामदास गौड़ 1918 1 आना

13. शिक्षितों का स्वास्थ्य व्यक्तिक्रम गोपाल नारायण सेन सिंह 1918 4 आना

14. पैमाइश मुरलीधर तथा नन्दलाल 1919 1 रु०

15. कपास तेजशंकर कोचक 1920 2 आना

16. आलू गंगाशंकर पंचौली 1920 2 आना

17. कृत्रिम काष्ठ गंगाशंकर पंचौली 1920 2 आना

18. हमारे शरीर की रचना बी० के० मित्र 1920 डेढ़ आना

19. जीनत वहश व तयर अनु० प्रो० मेंहदी हुसेन नासिरी 1921 1 आना

20. मनोरंजक रसायन गोपाल स्वरूप भार्गव 1923 डेढ़ रु०

21. सूर्यसिद्धान्त-विज्ञान भाष्य महावीर प्रसाद श्रीवास्तव मध्यमाधिकार 1924 10 आना
स्पष्टाधिकार 1925 12 आना
त्रिप्रश्नाधिकार 1927 डेढ़ रु०
चन्द्रग्रहणाधिकार से भूगोलाध्याय तक 1929 2 रु० 4 आना

22. फसल के शत्रु शंकर राव जोशी 5 आना

23. ज्वर निदान और सुश्रूषा बी० के० मित्र 1921 4 आना

24. मनुष्य का आहार गोपीनाथ गुप्त वैद्य 1922 1 रु०

25. वर्षा और वनस्पति शंकर राव जोशी 1923 4 आना

26. सुन्दरी मनोरमा की करुण कथा डॉ० सत्यप्रकाश 1925 5 आना

27. कार्बनिक रसायन डॉ० सत्यप्रकाश 1929 ढाई रु०

28. वैज्ञानिक परिमाण डॉ० निहालकरण सेठी तथा डॉ० सत्यप्रकाश 1929 डेढ़ रु०

29. साधारण रसायन डॉ० सत्यप्रकाश 1929 ढाई रु०

30. सर चन्द्रशेखर वेंकटरामन युधिष्ठिर भार्गव 1930 2 आना

31. समीकरण मीमांसा भाग 1 सुधाकर द्विवेदी 1931 डेढ़ रु०
भाग 2 सुधाकर द्विवेदी 1931 10 आना

32. वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्द भाग 1 डॉ० सत्यप्रकाश 1930 8 आना

33. निर्णायक गोपालकेशव गर्दे और गोमती प्रसाद अग्निहोत्री 8 आना

34. उद्भिज का आहार एन० के० चटर्जी 1931 8 आना

35. रसायन इतिहास सम्बन्धी लेख डॉ० आत्माराम 12 आना

36. प्रकाश रसायन वा० वि० भागवत 1932 सवा रु०

37.	बीजज्यामिति	डॉ० सत्यप्रकाश 1931	डेढ़ रु०
38.	उद्योग व्यवसायांक	1936	1 रु०
39·	फल संरक्षण	डॉ० गोरख प्रसाद 1937	1 रु०
40.	व्यंग्य चित्रण	अनु० डॉ० रत्नकुमारी 1938	1 रु०
41.	उपयोगी नुसखे	सम्पादक : डॉ० गोरख प्रसाद तथा डॉ० सत्य-प्रकाश 1940	ढाई रु०
42.	मिट्टी के बरतन*	प्रो० फूलदेव सहाय वर्मा 1940	1 रु०
43.	वायुमंडल	डॉ० के० बी० माथुर	डेढ़ रु०
44.	लकड़ी पर पालिश	डॉ० गोरख प्रसाद तथा श्री रामयत्न भटनागर	डेढ़ रु०
45.	कलम पेबंद	शंकर राव जोशी	डेढ़ रु०
46.	जिल्दसाजी	श्री सत्यजीवन वर्मा	डेढ़ रु०
47.	त्रिफला	डॉ० रामेश वेदी	डेढ़ रु०
48.	तैरना	डॉ० गोरख प्रसाद	सवा दो रु०
49.	अंजीर	डॉ० रामेश वेदी	1 रु०
50.	सरल विज्ञान सागर भाग 1	डॉ० गोरख प्रसाद	8 आना
51.	वायुमण्डल की सूक्ष्म हवायें	डा० सन्तप्रसाद टंडन	6 रु०
52.	खाद्य और स्वास्थ्य	ओंकार नाथ पर्ती	12 आना
53.	फोटोग्राफी	डॉ० गोरख प्रसाद	12 आना
54.	शिशुपालन	मुरलीधर बौड़ाई	4 रु०
55.	मधुमक्खी पालन	दयाराम जुगडान	4 रु०
56.	फसल के शत्रु	शंकर राव जोशी	3 रु०
57.	सांपों की दुनिया	डॉ० रामेश वेदी	सोढ़े तीन रु०
58.	पोर्सलीन उद्योग	प्रो० हीरेन्द्रनाथ बोस	4 रु०
59.	राष्ट्रीय अनुसंधानशालाएँ		12 आना
60.	गर्भस्थ शिशु की कहानी	प्रो० नरेन्द्र	2 रु०
61.	भारतीय कृषि का विकास	डॉ० शिवगोपाल मिश्र 1960	ढाई रु०
62.	रेल इंजन परिचय तथा संचालन	ओंकारनाथ शर्मा 1957	0 रु०
63.	कुष्ठ रोग	भारती जाधव 1986	2 रु०
64.	विज्ञान तकनीकी और पर्यावरण 2001	सं० प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव 1987	10 रु०

*अप्राप्य

'विज्ञान' के विशेषांक

			मूल्य
1. उद्योग व्यवसाय अंक	अप्रैल	1936	1·50
2. श्री रामदास गौड़ अंक	दिसम्बर	1937	0·25
3. रजत जयंती अंक		1938	1·00
4. शिलान्यास अंक		1956	
5. डॉ० गोरखप्रसाद स्मृति अंक	जून-जुलाई	1961	2·00
6. खन्ना स्मृति अंक	फरवरी	1966	1·00
7. अंतरिक्ष विज्ञान विशेषांक	दिसम्बर	1975	1·50
8. वैज्ञानिक परिव्राजक ('विज्ञान' और 'अनुसंधान पत्रिका' का संयुक्तांक)		1976	10·00
9. बाल विशेषांक	फरवरी	1979	1 50
10. वैज्ञानिक ऋषि		1979	4·00
11. प्रदूषण विशेषांक		1981	2·00
12. डार्विन 100 वर्ष बाद	दिसम्बर-जनवरी	1981-82	3·00
13. ऊर्जा विशेषांक		1983	3·00
14. डॉ० आत्माराम स्मृति अंक	मार्च	1984	3·00
15. विज्ञान कथा विशेषांक	नवम्बर-जनवरी	1984-85	4·00
16. विज्ञान, तकनीकी और पर्यावरण 2001	जनवरी-मार्च	1986	6·00

'अनुसंधान पत्रिका' के विशेषांक

1. ओमिक स्पर्श बनाने की तकनीक
2. रामन अंक
3. रिप्रम्स प्रक्रमों पर संगोष्ठी (दो भाग)
4. पुरातत्व विशेषांक

विज्ञान परिषद्, प्रयाग
की
नियमावली

(सन् 1960 के ऐक्ट 21 द्वारा मान्य)

[1963 ई० में संशोधित तथा परिवर्धित]

सन् 1913 में संस्थापित

संस्था का नाम और उद्देश्य

1—इस संस्था का नाम "विज्ञान परिषद् प्रयाग" है और इसी नाम का उपयोग समस्त व्यवहारों और प्रतिज्ञा-पत्रों में होगा। इस नियमावली में जहाँ कहीं भी "परिषद्" शब्द का प्रयोग है, उसका अभिप्राय "विज्ञान परिषद् प्रयाग" से है।

2—परिषद् के निम्न उद्देश्य हैं—

(क) भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक साहित्य की रचना,

(ख) वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार,

(ग) वैज्ञानिक अध्ययन और वैज्ञानिक अनुसंधान के कार्य को प्रोत्साहन, और

(घ) देश की वैज्ञानिक समस्याओं के सम्बन्ध में विचार-विमर्श और परामर्श।

संस्था का सहयोग और सम्पर्क

3—धारा (२) में दिए गए उद्देश्यों की पूर्ति के हित परिषद् भारत की और अन्य देशों की इसी प्रकार की संस्थाओं के साथ सहयोग और सम्पर्क रक्खेगी, और उन संस्थाओं के साथ प्रतिनिधियों का विनिमय करेगी, और आवश्यकतानुसार इस सम्बन्ध में उपनियम बनावेगी।

सदस्यता

4—परिषद् के सदस्यों को "सभ्य" कहा जायगा।

5—ये सभ्य पाँच कोटि के होंगे—

(क) नियमित 6 रुपया वार्षिक शुल्क देने वाले साधारण सभ्य,

(ख) एक साथ 100 रुपया शुल्क देने वाले आजीवन सभ्य,

(ग) एक सहस्र रुपया या इससे अधिक राशि देने वाले संरक्षक सभ्य,

(घ) विज्ञान की सेवा के उपलक्ष्य में बनाये गये आजीवन प्रतिष्ठित सभ्य, जिनसे कोई चन्दा नहीं लिया जायगा और ऐसे सभ्यों की सख्या 25 (पच्चीस) से अधिक न होगी। ये नाम अन्तरंग सभा द्वारा प्रस्तावित किए जायेंगे और साधारण अधिवेशन में ही पारित किए जा सकेंगे।

(ङ) संस्था-सदस्य अर्थात् 200 रु० एकसाथ शुल्क देकर शिक्षणालय और विज्ञान प्रेमी संस्थायें भी 20 वर्ष के लिए सदस्यता प्राप्त कर सकती हैं, अथवा ये संस्थायें 20 रु० देकर एक वर्ष के लिए सदस्यता प्राप्त कर सकती हैं।

(च) अन्य सभी संस्थाओं से आये हुए प्रतिनिधि– जिनमें परिषद् का प्रतिनिधित्व है एक संस्था का केवल एक ही प्रतिनिधि होगा। इन सभ्यों का प्रतिनिधित्व काल दो वर्ष का होगा किन्तु उस संस्था को अधिकार होगा कि उसे दुबारा भी प्रतिनिधि बना सके।

6—परिषद् की साधारण सभा को अधिकार होगा, कि वह धारा (5) में दिए गए शुल्कों और धन राशियों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर सके।

7—प्रत्येक सभ्य का वार्षिक शुल्क वर्ष के प्रारम्भ में लिया जायगा, वर्ष का प्रारम्भ इस कार्य के लिए पहली अप्रैल से माना जायगा।

8—सभ्य बनते समय प्रत्येक आजीवन और साधारण सभ्य को 3 रु० प्रवेश शुल्क देना होगा। यदि किसी सभ्य पर 2 वर्ष का शुल्क बकाया रह जाय, तो अन्तरंग सभा की स्वीकृति पर उसका नाम सदस्यता की सूची से पृथक कर दिया जायगा। दोबारा प्रवेश शुल्क लेकर ही उसको फिर सभ्य बनाया जा सकेगा।

9—जिन सभ्यों ने वर्ष का शुल्क पूरा दे दिया है, वे साधारण सभा में मत देने के अधिकारी होंगे, और उन्हें ही उस वर्ष के प्रकाशन प्राप्त करने का अधिकार होगा। शुल्क का बकाया चुकता करने पर ही वे सभ्य तत्सम्बन्धी पूर्व वर्षों के प्रकाशन प्राप्त कर सकेंगे।

10—धारा (5) में दिये गये सभी कोटि के सभ्यों को परिषद् के सब अधिवेशनों में उपस्थित रहने का, तथा अपना मत देने का, निर्वाच्य सज्जनों के लिये प्रस्ताव करने का, उनके चुनाव के पश्चात् प्रकाशित सब पुस्तकों, पत्रों, विवरणों आदि का रियायती अथवा बिना मूल्य पाने का अधिकार होगा, सभ्यों को केवल 'विज्ञान' मासिक पत्रिका बिना मूल्य मिलेगी, पर यदि परिषद् ने शोधादि सम्बन्धी कुछ विशेष पत्रिकायें निकालीं, तो उनके प्राप्त करने और ग्राहक बनने के विशेष उपनियम होंगे। किसी विशेष प्रकाशन के सम्बन्ध में भी परिषद् की अन्तरंग सभा ऐसे विशेष उपनियम बना सकती है, जिनके अनुसार सभ्यों को उन प्रकाशनों के प्राप्त करने का अधिकार होगा। परिषद् के सभ्यों को अपने सदस्यता-काल से पूर्व की प्रकाशित पुस्तकें अथवा अपने समय की प्रकाशित पुस्तकों की एक से अधिक प्रतियाँ तीन-चौथाई मूल्य में मिलेंगी।

11—परिषद् के सभ्यों को परिषद् के पुस्तकालय की पुस्तकों के व्यवहार का भी अधिकार होगा, और इस सम्बन्ध में परिषद् विशेष नियम भी बना सकेगी।

12—परिषद् के साधारण अधिवेशनों में कोई सभ्य अपने साथ दो व्यक्तियों को आमंत्रित करके भी ला सकता है। ऐसे आमंत्रित सज्जनों के नाम उनके लाने वाले सभ्यों के नाम के साथ एक रजिस्टर में अंकित किये जायेंगे।

13. परिषद् के सभ्यों को अधिकार होगा, कि वे नये सभ्यों के नाम सदस्यता के लिए प्रस्तावित करें, और इन नामों का समर्थन प्रस्तावक के अतिरिक्त किसी एक अन्य सभ्य द्वारा किया जाना आवश्यक होगा।

14—परिषद् की अन्तरंग सभा इन प्रस्तावित नामों को बहुमत से स्वीकार करेगी, और परिषद् के वार्षिक साधारण अधिवेशन में इन नामों की सूची प्रस्तुत की जायगी।

15—शुल्क बकाया रहने के अतिरिक्त अन्य कारणों द्वारा कोई सभ्य परिषद् की सदस्यता से तभी अलग किया जा सकेगा, जब इसी कार्य के लिए आयोजित साधारण सभा के उपस्थित सदस्यों में से तीन-चौथाई उसके अलग किए जाने के पक्ष में हों।

16—यदि कोई साधारण सभ्य किसी समय आजीवन सदस्य बनना चाहे, तो उसके आजीवन शुल्क की राशि में से उतने वर्षों का आधा शुल्क क्षमा कर दिया जायगा, जितने वर्ष वह लगातार साधारण सभ्य रह चुका है, और साधारण सदस्यता का शुल्क अदा कर चुका है।

17—परिषद् के किसी भी सभ्य को यह अधिकार होगा, कि वह चाहे त्यागपत्र दे दे। उसे अपने त्यागपत्र की स्वीकृति से पूर्व का पूरा शुल्क अदा करना होगा।

18—परिषद् के सम्पूर्ण स्वत्व के अधिकारी उसके सभ्य माने जायेंगे।

परिषद् के अधिकारी और उनके कर्तव्य

19—परिषद् के निम्न अधिकारी सभ्यों में से निर्वाचित होंगे—

(क) सभापति

(ख) उपसभापति—पूर्व वर्षों के सभी सभापति पद से हटने के बाद परिषद् के आजीवन उपसभापति (पदेन) रहेंगे। इन उपसभातियों के अतिरिक्त दो उपसभापति निर्वाचन द्वारा।

(ग) कोषाध्यक्ष

(घ) प्रधान मंत्री

(ङ) दो संयुक्त मंत्री

(च) पुस्तकालयाध्यक्ष

(छ) पत्रिकाओं और विशेष प्रकाशनों के प्रधान सम्पादक।

20—अधिकारिकों के अतिरिक्त परिषद् के कार्य संचालन के लिये एक अन्तरंग सभा रहेगी, जिसके चार अन्तरंगी इलाहाबाद के होंगे और (1) बिहार प्रदेश का एक, (2) बंगाल, उड़ीसा और आसाम से एक, (3) मध्य प्रदेश से एक, (4) राजस्थान से एक, (5) हिमांचल प्रदेश, जम्मू काश्मीर और पंजाब से एक (6) गुजरात और महाराष्ट्र से

एक, (7) आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, मद्रास और मैसूर से एक, (8) दिल्ली प्रदेश से एक एवं (9) उत्तर प्रदेश (इलाहाबाद से बाहर) के दो होंगे। इन बाहरी अन्तरंगियों के अतिरिक्त परिषद् की ऐसी प्रत्येक शाखा का एक प्रतिनिधि भी अन्तरंगी माना जायगा जिस शाखा में 50 या इसमें अधिक सदस्य होंगे।

21—पदाधिकारियों और अन्तरंग सभा के सदस्यों का निर्वाचन परिषद् के साधारण वार्षिक अधिवेशन में होगा और निर्वाच्य नामों की प्रस्तावना परिषद् की अन्तरंग सभा अपने इसी काम के लिये आयोजित एक अधिवेशन में करेगी। प्रस्तावित नामों की यह सूची मत देने के लिये परिषद् के सभी कोटि के सभ्यों के पास निर्वाचन तिथि से कम से कम दो सप्ताह पूर्व कार्यालय में भेजी जायेगी। ये मत पत्र साधारण वार्षिक सभा में सभापति की आज्ञा से गणना के लिये प्रस्तुत किये जायेंगे। सभापति गणना का यह कार्य अधिवेशन में उपस्थित दो सभ्यों द्वारा करायेगा और मत से निर्वाचित नामों की घोषणा करेगा।

22—मतगणना की पद्धति और उस सम्बन्धी उपनियम परिषद् की साधारण सभा समय-समय पर बना सकती है, पर इस सम्बन्ध में सभी संशोधनों की घोषणा मतपत्रों के पहुँचने से परिषद् को विज्ञप्ति द्वारा देनी होगी।

23—परिषद् के किसी भी सदस्य को यह अधिकार होगा कि पदाधिकारियों और अन्तरंगियों के लिए कोई भी नाम प्रस्तावित करके अन्तरंग सभा के पास विचारार्थ भेजे। ये नाम 31 दिसम्बर तक प्रधान मन्त्री के पास पहुँच जाने चाहिए।

24—निर्वाचन सम्बन्धी साधारण वार्षिक अधिवेशन सुविधानुसार जनवरी या फरवरी मास में हुआ करेगा, और नए निर्वाचित पदाधिकारी 1 अप्रैल से कार्यभार सम्भालेंगे।

सभापति

25—परिषद् के संचालन का समस्त उत्तरदायित्व सभापति पर होगा, और अनिवार्य परिस्थितियों में सभापति अन्तरंग सभा को स्थगित कर सकता है अथवा किसी पदाधिकारी का कार्यभार अपने ऊपर ले सकता है, पर ऐसा करने से 2 मास के भीतर ही उसे साधारण सभा द्वारा उचित व्यवस्था करा लेनी पड़ेगी।

26—सभापति का कर्तव्य होगा कि परिषद् के तथा अन्तरंग सभा के अधिवेशनों में अध्यक्षता करे और व्यवस्थापूर्वक इन अधिवेशनों का संचालन करे।

27—कोई सभ्य लगातार तीन वर्ष से अधिक परिषद् का सभापति चुना नहीं जा सकेगा।

28—सभापति का पद अकस्मात् खाली हो जाने पर परिषद् की अन्तरंग सभा किसी उपसभापति को शेष काल के लिए चुन लेगी जो सभापति के पूरे अधिकार रखेगा और उसके कर्तव्यों का पालन करेगा।

उपसभापति

29—जो व्यक्ति एक बार सभापति रह चुका है, वह अपने पद से हटने के बाद परिषद् का आजीवन उपसभापति (पदेन) रहेगा। सदस्यता का शुल्क न देने पर ही उसका नाम इस पद से हटाया जा सकेगा।

30—पदेन उपसभापतियों के अतिरिक्त दो उपसभापतियों का निर्वाचन परिषद् की साधारण सभा अपने वार्षिक अधिवेशन में करेगी।

31—सभापति की अनुपस्थिति में उपसभापतियों में से कोई अधिवेशनों की अध्यक्षता करेगा। सभी उपसभापतियों की अनुपस्थिति में कोई भी सदस्य अध्यक्षता के लिये अधिवेशन में प्रस्तावित किया जा सकता है।

32—आवश्यकता पड़ने पर सभापति की स्वीकृति अन्तरंग सभा अपने उपसभा-पतियों में से किसी को पूरे वर्ष के लिये अथवा थोड़े समय के लिये कार्यवाहक सभापति बना सकती है। कार्यवाहक सभापति को सभापति के पूर्ण अधिकार होंगे।

कोषाध्यक्ष

33—(क) परिषद् को जो पाना है वह रुपया कोषाध्यक्ष लेगा और अन्तरंग सभा की स्वीकृति के अनुसार प्रधान मन्त्री को जितने रुपये की आवश्यकता होगी कोषाध्यक्ष देगा।

(ख) रुपयों के लेने-देन और जमा खर्च का लेखा कोषाध्यक्ष रखेगा। लेखा के लिये वर्ष का प्रारम्भ 1 अप्रैल से प्रारम्भ होगा और 31 मार्च को वर्ष पूरा माना जायगा।

(ग) कोषाध्यक्ष अलग बही में परिषद् को विशेष कार्य के लिए प्रदान किये हुए द्रव्य का और स्थायी सभ्य होने वालों के चन्दे का हिसाब, परिषद् की साधारण आय से भिन्न रहेगा।

(घ) वर्ष के प्रारम्भ में कोषाध्यक्ष अन्तरंग सभा के अधिवेशन में उस वर्ष में होने वाले अनुमानिक आय-व्यय के विवरण को स्वीकृति के लिये उपस्थित करेगा।

(ङ) साधारण खर्च के लिये पचास रुपये तक अपने पास रख परिषद् का शेष रुपया कोषाध्यक्ष परिषद् के बैंक में रखेगा।

(च) किसी विशेष उद्देश्य के लिए दान मिले हुए रुपये का मूलधन तथा स्थायी सदस्यों के एकमुष्टि चन्दे का रुपया ब्याज पर जमा करेगा।

34—परिषद् की सम्पत्ति, और बैंकादि की निधियों, कैश सर्टिफिकेटों, सिक्यू-रिटियों और इस सम्बन्ध में प्रतिज्ञापत्रों पर कोषाध्याक्ष परिषद् की ओर से हस्ताक्षर करेगा।

मंत्री

35—मन्त्रिगण परिषद् के एवं अन्तरंग सभा के सब अधिवेशनों में उपस्थित रहेंगे,

कार्यवाही का संक्षिप्त विवरण रक्खेंगे, और उसे आगामी अधिवेशन में उपस्थित करेंगे और पढ़ेंगे। लेखक की प्रार्थना पर अन्तरंग सभा में आये हुए वैज्ञानिक लेखों को सुनायेंगे और परिषद् सम्बन्धी पत्र-व्यवहार का प्रबन्ध करेंगे।

36—कार्यालय का समस्त भार मन्त्रियों पर रहेगा और उनकी अधीनता में कार्यालय के कर्मचारी कार्य करेंगे।

37—(क) प्रधान मन्त्री के परामर्श से परिषद् के कार्यों का विभाजन सब मन्त्रियों में किया जायगा। इस कार्य-विभाजन की स्वीकृति प्रधान मन्त्री अन्तरंग सभा से लेगा।

(ख) विशेष विवादास्पद परिस्थितियों में परिषद् का सभापति कार्य-विभाजन के सम्बन्ध में अपना निर्णय देगा, और यह निर्णय मान्य समझा जायगा।

(ग) कार्यालय के वैतनिक कर्मचारियों की नियुक्ति मन्त्रियों के परामर्श से परिषद् की अन्तरंग सभा करेगी।

38—प्रतिवर्ष परिषद् के वार्षिक अधिवेशन में एक लेखापरीक्षक और एक चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट नियुक्त किया जायगा। वे कोषाध्यक्ष के लेखों की जाँच करेंगे और अपना विवरण देंगे। कोषाध्यक्ष यह विवरण अपने समाधानों सहित परिषद् की अन्तरंग सभा में और परिषद् के आगामी वार्षिक अधिवेशन में उपस्थित करेगा। लेखा-परीक्षक और चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट को सभी आवश्यक बहियों और कागज़ों के माँगने और देखने का अधिकार होगा। अन्तरंग सभा का कोई भी सभासद् लेखा परीक्षक नहीं हो सकता।

39—किसी विशेष विधि के आय-व्यय के लेखा का परीक्षण परिषद् सरकारी परीक्षकों से उचित शुल्क देकर या निःशुल्क भी करा सकती है।

सम्पादक

40—परिषद् की पत्रिकाओं, शोधपत्रों और मुखपत्रों एवं अन्य साहित्यिक कार्यों के सम्पादन का भार उस कार्य के लिये अन्तरंग सभा द्वारा नियुक्त प्रधान सम्पादकों और सम्पादक मण्डल पर रहेगा। अन्तरंग सभा आवश्यकतानुसार इस कार्य के लिये वैतनिक सहायकों की भी नियुक्ति कर सकेगी।

41—सम्पादकों के परामर्श से अन्तरंग सभा लेखकों के पारिश्रमिक और प्रकाशन की व्यवस्था के सम्बन्ध में उपनियम बनावेगी, और प्रकाशनों की नीति निर्धारित करेगी।

अंतरंग-सभा

42—परिषद् का मुख कार्य अन्तरंग सभा द्वारा होगा जिसके सदस्य धारा 19 और 20 में दिये गये अधिकारी और अन्तरंगी होंगे। अन्तरंग सभा के किसी अधिवेशन के लिए कम से कम 3 सभासदों की उपस्थिति आवश्यक होगी।

43—परिषद् के साधारण अधिवेशन के ठीक पहिले, उसी दिन, अन्तरंग सभा का सामान्य अधिवेशन हुआ करेगा। दो सभ्यों के हस्ताक्षरयुक्त प्रार्थनापत्र पाने पर अथवा अपनी ही समझ के अनुसार सभापति को अन्तरंग सभा के असाधारण अधिवेशन को बुलाने का अधिकार होगा। ऐसे अधिवेशन की सूचना देने के लिए सभापति मन्त्रियों को आदेश करेगा। अधिवेशन के लिए एक सप्ताह की सूचना आवश्यक होगी। सामान्यतः अन्तरंग सभा के सम्मुख समुपस्थित विषयों का निर्धारण हाथ उठाने की रीति से किया जायगा, यदि कोई विशेषतः बोली द्वारा विषय-निर्धारण का आग्रह न करे। अन्तरंग सभा में उपस्थित विषय में जिस किसी सभासद का व्यक्तिगत स्वार्थ होगा, उसके विचार काल में उसे अन्तरंग सभा से उठ जाना होगा।

44—परिषद् विषयक साधारणतः सभी कार्यों का पूर्व वर्ष का विवरण तैयार कराकर अन्तरंग सभा परिषद् के वार्षिक अधिवेशन में उपस्थित करावेगी और पढ़वावेगी, तथा यह विवरण या उसका सारांश अन्तरंग सभा के आदेश से सभ्यों में वितरणार्थ छपेगा।

45—नियमों में परिवर्तन का प्रस्ताव अन्तरंग सभा करेगी, परन्तु जब तक परिषद् के अगले वार्षिक अधिवेशन में अथवा इसी निमित्त बुलाये गये सदस्यों के विशेष अधिवेशन में उसका समर्थन न होगा, ये परिवर्तन व्यवहार में न आयेंगे।

वार्षिक अधिवेशन और असाधारण अधिवेशन

46—(क) परिषद् का अधिवेशन जनवरी मास के लगभग हुआ करेगा और उसमें अग्रिम वर्ष के कार्य-कर्त्ताओं का निर्वाचन होगा तथा परिषद् की स्थिति पर अन्तरंग सभा का विवरण उपस्थित होगा।

(ख) सभापति के आदेश अथवा अन्तरंग सभा की प्रार्थना पर या सदस्यों की कम से कम आधी संख्या के प्रार्थना करने पर सभापति परिषद् के असाधारण अधिवेशन का आवाहन कर सकेगा। किन्तु ऐसे अधिवेशन की कम से कम 15 दिन की सूचना या तो पूर्व अधिवेशन में अथवा सब स्थानीय सदस्यों को पत्र द्वारा जायगी। यदि अन्तरंग सभा ने चाहा तो बाहरी सदस्यों को भी अधिवेशनों की सूचना देनी होगी।

(ग) परिषद् के अधिवेशनों के कार्य का आरम्भ कम से कम 7 सदस्यों की उपस्थिति पर हो सकेगा। इस संख्या से कम की उपस्थिति होने पर अधिवेशन स्थगित कर दिया जायगा।

49—वार्षिक अधिवेशन की सूचना समाचार पत्रों में छपने को भेजी जायगी और सभ्यों को विशेष रूप से पत्र द्वारा दी जायगी।

50—परिषद् के वार्षिक अधिवेशन साधारणतया परिषद् के प्रधान कार्यालय, प्रयाग में हुआ करेंगे, परन्तु आमंत्रित किये जाने पर वे अधिवेशन प्रयाग से बाहर अन्यत्र भी किये जा सकेंगे।

51—परिषद् के वार्षिक अधिवेशनों का कार्यक्रम साधारणतः निम्न होगा, और इसकी व्यवस्था परिषद् की अन्तरंग सभा करेगी—

(क) सभापति द्वारा कोई सूचना या विज्ञप्ति,

(ख) गत अधिवेशन के संक्षिप्त कार्य विवरण का पढ़ा जाना और स्वीकृत होना,

(ग) वैज्ञानिक लेखों का पढ़ा जाना और उन पर विचार,

(च) सभापति की स्वीकृति पर कोई और कार्य,

(छ) निर्वाचन सम्बन्धी मतगणना और

(ज) कोई सुबोध व्याख्यान ।

पुस्तकालय

52—परिषद् अपने भवन में वैज्ञानिक साहित्य सम्बन्धी एक पुस्तकालय सदस्यों और अपने लेखकों के उपयोग के लिये स्थापित करेगी । अपने प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं के बदले में आयी हुई पत्रिकायें और समालोचनार्थ आयी हुई पुस्तकें इस पुस्तकालय में रक्खी जायेंगी । पुस्तकालय की समृद्धि और उपयोग के लिये अन्तरंग सभा आवश्यकतानुसार उपनियम बनावेगी ।

भवन

53—परिषद् का मुख्य भवन प्रयाग विश्वविद्यालय के विज्ञान-विभाग की भूमि पर है । इस सम्पत्ति पर परिषद् का पूर्ण अधिकार है । इस भवन की सुव्यवस्था का पूर्ण अधिकार परिषद् का है । जिस भूमि पर यह भवन है, वह प्रयाग विश्वविद्यालय की है, और जब तक परिषद् अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जीवित है, तब तक उसका इस सम्पत्ति पर अधिकार होगा । परिषद् के जीवन के अनन्तर इस सम्पत्ति के उपयोग की व्यवस्था प्रयाग विश्वविद्यालय के हाथ होगी ।

54—इस मुख्य भवन के अतिरिक्त परिषद् और उसकी शाखायें और अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये प्रयाग में अथवा अन्य स्थानों पर भी भवन बनवा सकती हैं, और उस सम्पत्ति पर भी परिषद् का पूर्ण स्वत्य रहेगा ।

55—भवनों के सम्बन्ध के समस्त प्रतिज्ञा पत्रों पर परिषद् की ओर से कोषाध्यक्ष के हस्ताक्षर होंगे ।

प्रकाशन

56—परिषद् स्वयं वैज्ञानिक साहित्य का प्रकाशन करेगी, और दूसरे व्यक्तियों और संस्थाओं को भी ऐसे साहित्य के प्रकाशन के प्रति प्रोत्साहित करेगी । परिषद् की अन्तरंग सभा को अधिकार होगा कि सभी प्रकार के प्रकाशनों के सम्बन्ध में उपनियम बनावे, और दूसरे व्यक्तियों एवं संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करने का उचित प्रबन्ध करे ।

57—लेखकों, प्रकाशकों, विक्रेताओं और समकक्ष संस्थाओं के साथ जो प्रतिज्ञा पत्र होंगे उन पर परिषद् की ओर से प्रधानमन्त्री के हस्ताक्षर होंगे।

व्याख्यानों का प्रबन्ध

58—परिषद् के तत्वावधान में वैज्ञानिक विषयों पर व्याख्यानों का प्रबन्ध अपने भवन में, प्रयाग में और प्रयाग से बाहर अन्य नगरों में, विशेषतया शिक्षा-संस्थाओं में, समय-समय पर किया जायगा, और इस कार्य के लिए विद्वानों को आमंत्रित किया जा सकेगा।

शाखायें

59—जिन केन्द्रों (नगर, ग्राम आदि) में 15 से अधिक परिषद् के सदस्य होंगे, वे यदि चाहे तो परिषद् की स्वीकृति से अपने केन्द्र में परिषद् की एक शाखा खोल सकते हैं। यह शाखा परिषद् से सम्बद्ध रहेगी और इस शाखा द्वारा वे समस्त कार्य किये जा सकेंगे जिनसे परिषद् के उद्देश्यों की पुष्टि हो।

60—परिषद् के शाखा सभ्यों से भी वार्षिक शुल्क अथवा आजीवन शुल्क उतना ही लिया जायगा जितना कि परिषद् के अपने सदस्यों से, परन्तु इनका वार्षिक अथवा आजीवन शुल्क का २५ प्रतिशत अंश संचालन कार्य के लिए शाखा को दिया जायगा।

हरिशरणानन्द विज्ञान पुरस्कार

पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी के अध्यक्ष, लब्धप्रतिष्ठ वैद्य श्री हरिशरणानन्द जी का विज्ञान परिषद् पर पुराना अनुग्रह है और उन्हें विज्ञान, वैज्ञानिक साहित्य तथा वैज्ञानिक पद्धति में अतीव निष्ठा है। आपने विज्ञान परिषद् को इस कार्य के निमित्त एक निधि दी है, जिससे हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के सृजन करने वालों को गौरवान्वित किया जा सके। विज्ञान परिषद्, प्रयाग श्री हरिशरणानन्द जी के नाम के साथ सम्बद्ध एक पुरस्कार की स्थापना करने में अपना गौरव अनुभव करती है, क्योंकि इस पुरस्कार से वह हिन्दी वैज्ञानिक साहित्य के उच्चतम साहित्यकों को सम्मानित कर सकेगी।

नियामवली

1—पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी के अध्यक्ष श्री हरिशरणानन्द जी की निधि से संचालित एवं विज्ञान परिषद्, प्रयाग द्वारा प्रदत्त इस पुरस्कार का नाम "हरिशरणानन्द विज्ञान पुरस्कार" होगा।

2—यह पुरस्कार प्रतिवर्ष दिया जायगा और दो सहस्र रुपये (2000 रु०) का होगा।

3—इस पुरस्कार का संचालन विज्ञान परिषद्, प्रयाग द्वारा होगा, जो प्रतिवर्ष इस कार्य की सुविधा के निमित्त पाँच सदस्यों की एक "हरिशरणानन्द पुरस्कार समिति" बनाया करेगी। समिति के सदस्य निम्न होंगे—

क—श्री हरिशरणानन्द जी आजीवन सदस्य

ख—विज्ञान परिषद्, प्रयाग के सभापति अथवा कार्यवाहक सभापति पदेन

ग—परिषद् के मंत्रियों में से कोई एक सदस्य

घ—दो अन्य सदस्य, जिनकी संस्तुति विज्ञान परिषद्, प्रयाग की कार्यकारिणी समिति किया करेगी।

श्री हरिशरणानन्द जी के जीवन के अनन्तर, यदि उनका आदेश होगा, उनके उत्तराधिकारी को भी उनके स्थान पर सदस्य बनाया जा सकेगा, पर इस सम्बन्ध में उसकी सदस्यता एवं सदस्यता-काल के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय विज्ञान परिषद् की कार्यकारिणी समिति का ही मान्य होगा।

4—प्रतिवर्ष अक्टूबर मास के निकट परिषद् की ओर से पुरस्कार के निमित्त पुस्तकें आमंत्रित की जावेंगी, और इस सम्बन्ध में समयानुसार विज्ञप्तियाँ समाचार पत्रों में प्रकाशित होंगी, इन विज्ञप्तियों में पुस्तक भेजने की अन्तिम तिथि की घोषणा होगी।

5—यह पुरस्कार 'विज्ञान' सम्बन्धी विषय की किसी भी रचना पर दिया जा सकेगा। अनुवाद-ग्रन्थों और एक से अधिक व्यक्तियों के सहयोग से लिखे गए ग्रन्थों पर विचार नहीं किया जावेगा।

6—पुरस्कार के निमित्त "पुरस्कार समिति" को यह अधिकार होगा कि आमंत्रित पुस्तकों के अतिरिक्त अपनी ओर से भी पुस्तकें विचारार्थ रक्खे।

7—लेखकों अथवा प्रकाशकों के लिए यह आवश्यक होगा कि विचारार्थ पुस्तक की आठ प्रतियाँ घोषित तिथि के भीतर परिषद् के पास भेजें।

8—पुरस्कार का निर्णय निम्न प्रकार होगा—

क—पुरस्कार समिति पुस्तकों को तीन विशेषज्ञ निर्णायकों के पास भेजेगी। निर्णायकों की नामावली समिति गोपनीय रक्खेगी। निर्णायक पुस्तक की उपयोगिता, मौलिकता, भाषा आदि के सम्बन्ध में अपनी लिखित सम्मति देंगे, जिनके आधार पर पुरस्कार समिति पुरस्कार का निर्णय करेगी। निर्णायकों को निर्देश करना आवश्यक होगा, कि उनमें विचारानुसार कौन सी रचना प्रथम, द्वितीय अथवा तृतीय है।

ख—पुरस्कार समिति इस बात पर बाध्य न होगी, कि प्रतिवर्ष पुरस्कार दिया ही जाय। योग्य पुस्तकों के न आने पर किसी भी वर्ष का पुरस्कार स्थगित किया जा सकता है। स्थगित पुरस्कार का रुपया पुरस्कार की स्थायी निधि में जमा कर दिया जायगा, जिसके उपयोग के सम्बन्ध में पुरस्कार समिति आवश्यक निर्णय करेगी।

ग—पुरस्कार-निर्णय के सम्बन्ध में पुरस्कार समिति का निर्णय अन्तिम और मान्य होगा।

घ—यदि किसी पुस्तक पर पुरस्कार न मिल सका हो, तो वह अधिक से अधिक तीन बार तक विचारार्थ प्रस्तुत की जा सकती है।

ङ—पुरस्कार समिति विज्ञप्तियों द्वारा इस बात की घोषणा किया करेगी, कि अमुक वर्ष विज्ञान सम्बन्धी किस विषय की पुस्तकें आमंत्रित की जायेंगी और किस अवधि के भीतर प्रकाशित पुस्तकों पर विचार होगा। उस सम्बन्ध में पुरस्कार समिति समय-समय पर अपनी सुविधा के लिए नियम बना सकती है। इन नियमों की पुष्टि विज्ञान परिषद् की कार्य समिति से करा लेना आवश्यक होगा। कार्य समिति द्वारा व्यक्त मतवैभिन्य पर पुरस्कार समिति फिर विचार करेगी पर पुरस्कार समिति का निर्णय अन्तिम और मान्य समझा जावेगा।

च—पुरस्कार समिति के सदस्यों और निर्णायकों की रचना पर पुरस्कारार्थ विचार न हो सकेगा। यदि उनकी रचना विचारार्थ आयी हो, तो उन्हें समिति से और निर्णायकों की सूची से उस वर्ष अलग रहना होगा।

9—(क) किसी भी व्यक्ति को एक से अधिक बार यह पुरस्कार नहीं मिल सकेगा।

(ख) पुरस्कार एक से अधिक व्यक्तियों में बाँटा न जा सकेगा। पुरस्कार के साथ पुरस्कृत व्यक्ति को एक स्वर्ण पदक "हरिशरणानन्द विज्ञान परिषद् पदक" भी भेंट किया। जावेगा।

(घ) पुरस्कार और पदक का वितरण साधारणतः विज्ञान परिषद्, प्रयाग के वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर विशेष समारोह के साथ हुआ करेगा। यदि किसी कारण से वार्षिक अधिवेशन के साथ प्रबन्ध की सुविधा न हुई, तो परिषद् की कार्य समिति अन्य प्रबन्ध भी कर सकती है। उसे यह अधिकार होगा कि यह समारोह प्रयाग में करे अथवा अन्यत्र।

10—पुरस्कार सम्बन्धी इन नियमों में आवश्यक परिवर्तन पुरस्कार समिति की संस्तुति पर यथासमय कार्य समिति कर सकती है। नियमों में समय-समय पर जो भी परिवर्तन होंगे, उनकी सूचना श्री हरिशरणानन्द जी को भी अनिवार्यतः दी जावेगी और सुझावों पर कार्य समिति आवश्यक विचार करेगी।

स्वामी हरिशरणानन्द स्वर्ण-पदक की नियमावली

1—पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी के पूर्व अध्यक्ष स्व० श्री हरिशरणानन्द जी की निधि के व्याज से संचालित एवं विज्ञान परिषद् द्वारा प्रदत्त इस पदक का नाम 'स्वामी हरिशरणानन्द स्वर्ण-पदक' होगा।

2—यह स्वर्ण-पदक विज्ञान परिषद् द्वारा प्रत्येक वर्ष विज्ञान की सर्वोत्तम प्रकाशित पुस्तक के लेखक को प्रदान किया जायगा। जिस वर्ष पदक दिया जायगा, पुस्तक उसके पूर्व तीन कैलेन्डर वर्ष के भीतर प्रकाशित हुई होनी चाहिए।

3—प्रत्येक वर्ष 'विज्ञान' तथा दो अन्य दैनिक समाचार पत्रों में इस पुरस्कार की घोषणा की जायगी और लेखकों को आमंत्रित किया जायगा कि वे पुस्तक की तीन प्रतियाँ विज्ञान-परिषद् की पुरस्कार समिति को निश्चित विज्ञापित तिथि के भीतर भेजें।

4—स्वर्ण-पदक प्रदान करने का संचालन परिषद् की पुरस्कार समिति करेगी। इस समिति के सदस्य निम्नलिखित होंगे—

(क) परिषद् के सभापति

(ख) एक पदेन उपसभापति (अध्यक्ष द्वारा मनोनीत)

(ग) कोषाध्यक्ष

(घ) प्रधान मंत्री

(ङ) 'अनुसंधान पत्रिका' के सम्पादक

5—पुरस्कार समिति को अधिकार होगा कि ऐसी पुस्तकों पर भी विचार करें जिन्हें लेखकों ने न भेजा हो।

6—यह समिति अपना निर्णय तीन विशेषज्ञों की सम्मति प्राप्त करने के बाद लेगी। विशेषज्ञों के नाम गोपनीय होंगे।

7—पुरस्कार समिति का निर्णय अंतिम होगा।

3—पुरस्कार समिति के सदस्यों तथा सम्मति देने वाले विशेषज्ञों की रचना पर पदक नहीं प्रदान होगा।

9—सामान्यतः यह स्वर्ण-पदक परिषद् के वार्षिक अधिवेशन के समय वितरित होगा।

10—प्रतियोगिता में आयी हुई पुस्तकों में से किसी एक पुस्तक पर दो बार से अधिक विचार नहीं होगा। (यह नियम उन पुस्तकों पर लागू नहीं होगा जिन्हें समिति अपनी ओर से रखेगी।)

श्रीमती डॉ० रत्नकुमारी स्वर्ण-पदक

नियमावली

1—परिषद् के पदेन उपसभापति डॉ० सत्यप्रकाश जी के अनुदान के व्याज से संचालित एवं विज्ञान परिषद् द्वारा प्रदत्त इस पदक का नाम 'श्रीमती डॉ० रत्नकुमारी स्वर्ण-पदक' होगा।

2—यह स्वर्ण पदक विज्ञान परिषद् द्वारा हर दूसरे वर्ष विज्ञान परिषद्-अनुसंधान पत्रिका में प्रकाशित सर्वोत्तम शोधपत्र के लेखक को प्रदान किया जायगा। जिस वर्ष पदक दिया जायगा, लेख उसके पिछले दो वर्षों के किसी अंक में छपा होना चाहिए।

3—इस स्वर्ण पदक को प्रदान करने का निर्णय एक पुरस्कार समिति करेगी, जिनके सदस्य निम्नलिखित होंगे :—

(क) परिषद् के सभापति

(ख) एक पदेन उपसभापति

(ग) कोषाध्यक्ष

(घ) प्रधान मंत्री

(ङ) 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' के प्रधान संपादक

4—हर दूसरे, वर्ष पुरस्कार समिति कम से कम तीन विशेषज्ञों की सम्मति प्राप्त करके, अपना निर्णय लेगी। विशेषज्ञों के नाम गोपनीय होंगे।

5—पुरस्कार समिति का निर्णय अंतिम तथा मान्य होगा।

6—पुरस्कार समिति के सदस्यों तथा सम्मति देने वाले विशेषज्ञों के शोधपत्रों पर पदक नहीं प्रदान होगा।

7—सामान्यत: इस स्वर्ण पदक का परिषद् के वार्षिक अधिवेशन के समय वितरण होगा।

हरिशरणानन्द विज्ञान पुरस्कार

1.	1959	हीरेन्द्रनाथ बोस	मृत्तिका उद्योग	उच्चतर
		—	—	जनोपयोगी
		—	—	बाल
2.	1960	भ० न० थधाणी	निर्माण विज्ञान के सिद्धान्त	
		सुरेश सिंह	जीवजगत	
		केशव सागर	हवा की बातें	
3.	1961	डॉ० सत्यप्रकाश	प्राचीन भारत में रसायन	
			की परम्परा	उच्च
			भारतीय कृषि का विकास	
			डॉ० शिवगोपाल मिश्र	जनोपयोगी
			झिलमिलाते हुए तारे	
			रमेश वर्मा	बाल
4.	1962	शिवनाथ प्रसाद	भूमि रसायन	उच्च
		(प्रथम)		
		विनोदकरण सेठ	सांख्यिकी के सिद्धान्त और	
		(द्वितीय)	उपयोग	उच्च
		—	—	जनोपयोगी
5.	1963	मनमोहन भदारिया	दुनिया की दुनिया	बाल
		—	—	उच्च
		शैलेन्द्र कुमार	कृषिविनाशी कीट और	
		'निर्मल'	उनका दमन	जनोपयोगी

		रमेश वर्मा (प्रथम)	हमारा पड़ोसी चाँद	बाल
		योगेन्द्र कुमार लल्ला	खेल भी विज्ञान भी	,,
6.	1972	एस० सी० सहगल (इलाहाबाद)	नवीन वनस्पति विज्ञान	
7.	1974	निरंजन सिंह (हरियाणा)	बीजगणित	
8.	1975	नन्दलाल बाशेदिया (इन्दौर)	यक्ष्मा की पाठ्य-पुस्तक	
		आर० पी० प्रधान (ग्वालियर)	द्रव्य सामर्थ्य	
9.	1977	डॉ० मनहरणनाथ श्रीवास्तव (इलाहाबाद)	धातुओं के कीलेट संकर	
10.	1978	डॉ० वृजगोपाल (राजस्थान)	पादप परिस्थितिकी और पादप भूगोल	
11.	1980	मुकुल घोष (वाराणसी)	भौतिक भूविज्ञान	

डॉ० रत्न कुमारी स्वर्ण–पदक विजेता

1972	डॉ० पी० राय चौधरी
1977	डॉ० वी० एन० भटनागर तथा डॉ० पी० जी० संत
1979-80	श्री सी० के० शर्मा

डॉ० गोरख प्रसाद पुरस्कार

नियमावली

स्वर्गीय डॉ० गोरख प्रसाद के दौहित्र श्री अरुण राय ने अपने स्वर्गीय नाना डॉ० गोरख प्रसाद की स्मृति में यह पुरस्कार विज्ञान परिषद् में देने की कृपा की। श्री अरुण राय प्रति वर्ष विज्ञान के तीन सर्वश्रेष्ठ लेखों के लिए 250 रु० की राशि प्रदान करते हैं। वर्ष 1978 से नियमित रूप से यह पुरस्कार लेखकों को प्रोत्साहन स्वरूप दिया जा रहा है। पुरस्कार प्रदान करने वाली समिति में परिषद् के प्रधान मंत्री, 'विज्ञान' पत्रिका के सम्पादक और श्री अरुण राय हैं।

डॉ० गोरख प्रसाद पुरस्कार विजेता

1. 1978—(1) डॉ० श्यामलाल काकानी (2) श्री गणेश दत्त पाण्डेय
   (3) श्री अखिलेश चन्द्र राठौर
2. 1979—(1) डॉ० बिन्दाप्रसाद (2) श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव
   (3) श्री शक्ति प्रकाश रावत
3. 1980—(1) डॉ० प्रेमचन्द्र मिश्र (2) कु० रुचि श्रीवास्तव
   (3) श्री रमेशदत्त शर्मा
4. 1981—(1) श्री अरविन्द मिश्र (2) डॉ० सरयू प्रसाद पाठक
   (5) डॉ० सद्‌गुरु प्रकाश
5. 1982—(1) डॉ० चन्द्रमोहन भण्डारी (2) श्री श्याम सरन 'विक्रम'
   (3) श्री ए० के० राय
6. 1983—(1) डॉ० ओमप्रभात अग्रवाल (2) श्री नरेश बाली
   (3) डॉ० विमलेश चन्द्र श्रीवास्तव
7. 1984—(1) डॉ० सुशीला राय
   (2) डॉ० ज्ञानेन्द्र सिंह एवं डॉ० महेश कुमार शर्मा
   (3) डॉ० भारतेन्दु प्रकाश
8. 1985—(1) श्री आशुतोष मिश्र (2) श्री विजय जी
   (3) डॉ० देवेन्द्रनाथ सिन्हा
9. 1986—(1) डॉ० महेन्द्र सिंह वर्मा (2) श्री सतीश कुमार शर्मा
   (3) श्री अनिल कुमार शुक्ल
10. 1987—(1) कु० पूनम वार्ष्णेय (2) श्री कृष्ण प्रकाश त्रिपाठी
   (3) श्री राघवेन्द्र कृष्ण प्रताप

डॉ० आत्माराम स्मृति व्याख्यानमाला

नियमावली

विज्ञान परिषद्, प्रयाग के अप्रतिम शुभचिंतक, अनन्य हिन्दी प्रेमी एवं लब्धप्रतिष्ठ वैज्ञानिक स्वर्गीय डॉ० आत्माराम की पत्नी श्रीमती सीता देवी ने अपने पति की पुण्य स्मृति में 'विज्ञान परिषद्' को अप्रैल 1987 में बीस हज़ार रुपये की राशि प्रदान की। विज्ञान परिषद् की अंतरंग सभा ने यह निश्चय किया है कि इस राशि से प्राप्त होने वाले ब्याज से प्रतिवर्ष एक व्याख्यान का आयोजन किया जाएगा। इस व्याख्यानमाला की नियमावली निम्नवत् है—

(1) इसे 'डॉ० आत्माराम स्मृति व्याख्यानमाला' कहा जाएगा।

(2) यह व्याख्यान हिन्दी या अंग्रेज़ी में होगा।

(3) यह व्यख्यान देश के किसी भी स्थान पर आयोजित किया जा सकेगा।

(4) व्याख्यानदाता विज्ञान की किसी भी शाखा का सुप्रसिद्ध विद्वान् होगा।

(5) व्याख्यानदाता को अपने व्याख्यान की टंकित प्रति व्याख्यान के पूर्व 'विज्ञान परिषद् प्रयाग' को प्रदान करनी होगी।

(6) इस व्याख्यान को प्रकाशित करने का अधिकार विज्ञान परिषद्, प्रयाग को होगा।

(7) इस व्याख्यान के लिए विज्ञान से सम्बन्धित लोक महत्त्व एवं लोक रुचि के विषयों पर गम्भीर विवेचनात्मक सामग्री अपेक्षित होगी। यथा—

(i) भारत के औद्योगिक एवं कृषीय विकास में विज्ञान की विविध शाखाओं की भूमिका।

(ii) विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के विकास में भारतीय परम्परा।

(iii) हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक लेखन के विविध पक्ष।

(iv) विज्ञान और मानवीय मूल्य।

(v) समाज में शांति व समन्वय का प्रसार और प्रचार।

(8) व्याख्यानदाता को एक हज़ार रुपये मानदेय के अतिरिक्त आने-जाने का प्रथम श्रेणी का रेल का मार्ग व्यय दिया जाएगा। यदि आवश्यक हुआ तो ठहरने की व्यवस्था भी की जाएगी।

(9) व्याख्यानमाला के आयोजन के निमित्त तीन सदस्यों की एक समिति का गठन विज्ञान परिषद् करेगी। इस समिति का कार्यकाल साधारणतया तीन वर्ष रहेगा।

(10) यदि कारणवश किसी वर्ष व्याख्यान का आयोजन संभव न हो सका तो अगले वर्ष दो व्याख्यानों का आयोजन किया जा सकता है; अन्यथा उस वर्ष की ब्याज राशि सम्बन्धित बैंक खाते में जमा रहेगी।

खण्ड 2
संस्मरण

वैज्ञानिक परिव्राजक से एक साक्षात्कार

[मूर्धन्य विचारक और मनीषी तथा ख्यातिप्राप्त रसायनविज्ञानी स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती के व्यक्तित्व के अनेक पहलू हैं। वैज्ञानिक शोध, आध्यात्मिक चिंतन, प्राचीन इतिहास और संस्कृति का विश्लेषण, ज्ञान-पिपासा और प्रकाण्ड विद्वता समस्त गुण उनमें समाहित हैं। उनकी प्रतिभा की अजस्र धारा अनेक विन्दुओं को छूती हुई आगे बढ़ती है। उच्चकोटि के वज्ञानिक ग्रन्थों के प्रणयन और शोध से उन्होंने जितनी ख्याति अर्जित की है उतनी ही वेदों की सारगर्भित व्याख्या-टीका प्रस्तुत करके भी। बहुमुखी ऊर्जस्विता भरे इस चलते-फिरते ज्ञान-कोष के अनेक पृष्ठों में एक पृष्ठ है, हिन्दी सेवा का—जिसके प्रति वे जीवन के प्रारम्भिक वर्षों से ही समर्पित रहे। स्वामी जी हिन्दी विज्ञान लेखन के उन प्रारम्भिक स्तम्भों में हैं जिन्होंने लेखन को एक निश्चित दिशा प्रदान की। इस राष्ट्र-भाषा निष्ठा और विचारशील मेधा की कुछ झलक प्रस्तुत है निम्नलिखित साक्षात्कार में। उनकी आडम्बरहीन सरलता के सहयोग से ही साक्षात्कार एक ही बैठक में पूरा हो सका, इसके लिए मैं हृदय से स्वामी जी का कृतज्ञ हूँ और उन्हें कष्ट देने के लिए क्षमा प्रार्थी भी। 84 वर्ष की परिपक्व अवस्था के बावजूद वे तन-मन से शिथिल नहीं हैं और आर्य धर्म के प्रसार में डूबे हैं। साथ ही विज्ञान के प्रसार और लेखन के प्रति भी उनकी हितचिन्ता बनी हुई है। ईश्वर से उनकी स्वस्थ और सक्षम दीर्घायु की कामना के साथ— **प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव**]

प्रश्न : स्वामी जी ! आप चोटी के शिक्षाविद् और रसायनविज्ञानी रहे हैं। आपके पठन-पाठन का माध्यम तो सम्भवत: हिन्दी न होकर अंग्रेज़ी ही रहा होगा। हिन्दी में विज्ञान लेखन की ओर आप कैसे उन्मुख हुए ?

स्वामी जी : मेरे पिताजी राजकीय विद्यालय, बाराबंकी में अध्यापक थे। आर्य-समाज के सम्बन्ध से हिन्दी के प्रति उनकी रुचि थी यद्यपि वे मूलत: उर्दू-फारसी के विद्यार्थी थे। हिन्दी में वे प्रथम व्याकरण लिखने वाले थे जो 'इण्डियन प्रेस' से प्रकाशित हुई थी। उत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग ने एक बार कुछ पाठ्य-पुस्तकों को आमन्त्रित किया और उन पर पुरस्कार भी घोषित किया। पिताजी का विषय विज्ञान तो नहीं था लेकिन राज-कीय विद्यालय में विज्ञान के जो अध्यापक थे उन्होंने स्वयं एक पुस्तक विज्ञान की लिखी थी। उन्होंने ही उपाध्याय जी (पिताजी) से हिन्दी और उर्दू में अनुवाद करवाया। यह घटना 1915-16 की है। उस उद्देश्य से 'नागरी प्रचारिणी सभा' ने जो शब्दकोष तैयार

किया था उसकी प्रति मेरे घर में आ गई। उस समय सातवीं कक्षा से विज्ञान की पढ़ाई प्रारम्भ होती थी। मैं विज्ञान पढ़ने लगा। माध्यम अंग्रेज़ी था। 1910 में मैं प्रयाग आ गया। उन्हीं दिनों टंडन जी आदि के प्रयास से हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा प्रथमा, माध्यमा आदि की कक्षायें खुलीं। मैं भी प्रथमा का विद्यार्थी बना। प्रो० सालिगराम भार्गव म्योर कॉलेज के पास रहते थे और सप्ताह में एक दिन विज्ञान पढ़ाने हिन्दी विद्यापीठ में जाते थे। मैंने प्रथमा पास की और उसमें सर्वप्रथम आया। हिन्दी माध्यम से मैंने प्रथम परीक्षार्थी के रूप में प्रथमा की परीक्षा पास की। इण्टर में था तो प्रो० गोपालस्वरूप भार्गव के घर जाने लगा। वे **'विज्ञान'** के सम्पादक थे। उनकी प्रेरणा से मैं **'विज्ञान'** (हिन्दी मासिक पत्रिका) में लिखने लगा। युग बदला और जब मैंने एम० एस-सी० पास किया तब तक **'विज्ञान'** से पूरी तरह जुड़ चुका था। 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के निकट ही विज्ञान परिषद् ने एक छोटी ज़मीन ली थी और वहीं 1925 के आस-पास दो कमरे बने। 'विज्ञान' पत्रिका का कार्य मैं देखने लगा। गोरख प्रसाद जी, महावीर प्रसाद जी और मैं परिषद् के कार्य में जुट गये। फिर विज्ञान परिषद् का कार्यालय घर ले आये। बाद में विज्ञान परिषद् की वह ज़मीन बेचकर वर्तमान भवन की ज़मीन ली गई। इसका श्रेय खन्ना जी को है। इस बीच मैं विज्ञान का विद्यार्थी था अतः मुझे 'एम्प्रेस विक्टोरिया रीडर्स छात्रवृत्ति' मिल गई। इसमें हिन्दी या उर्दू में लेखन की शर्त थी। मैंने इसका पूरा उपयोग किया और पुस्तकें लिखीं। छपी पुस्तकों की 100 प्रतियाँ मिलती थीं। इसमें मैंने 'साधारण रसायन', 'कार्बनिक रसायन' और 'बीज ज्यामिति' (इण्टर के लिए) हिन्दी में लिखीं। गुरुकुल कांगड़ी ने भी पाठ्य-पुस्तक लिखाई थी।

प्रश्न : वे कौन से वैज्ञानिक थे—देशी या विदेशी—जिनसे प्रभावित होकर आपने अपने अनुसन्धान के क्षेत्र का चुनाव किया ?

स्वामी जी : मैं सर्वाधिक डॉ० धर से प्रभावित रहा। कार्बनिक रसायन ही स्पेशल पेपर लिया। इसमें कुछ कच्चा था अतः इसे चुनौती के रूप में स्वीकार किया। प्रेरणा-स्रोत के रूप में डॉ० नीलरत्न धर और सर सी० वी० रामन के नाम विशेषतः ले सकता हूँ। विदेशी वैज्ञानिकों में ओहायो के प्रो० केली, जिन्होंने रोमन और ग्रीक सिक्कों पर कार्य किया है; उल्फ और ऑस्वल्ड कोलायड में; जर्मनी के प्रो० फ्राउलिश (Freundlich), जो भौतिक रसायन के जनक थे और फ्रांस के प्रूडहोम (Prudhomme) ने भी प्रभावित किया। सबसे अधिक प्रेरणा प्रो० रामन से मिली जब मैं उनकी प्रयोगशाला में गया। उन्हीं के प्रस्ताव पर मैं 'एकेडेमी ऑव साइंसेज' का सदस्य बना। प्रो० टेमेन, जो एक सम्पादक भी थे, से भी मुझे प्रेरणा मिली है।

प्रश्न : क्या आप अपने अनुसन्धान के विषय में संक्षेप में कुछ बताने की कृपा करेंगे ?

स्वामी जी : मेरे शोध के विषय रहे हैं—कोलॉयड केमेस्ट्री, ब्लड केमेस्ट्री, जेली, अल्ट्रासॉनिक्स। मेरा एक मोनोग्राफ अल्ट्रासॉनिक्स और कोलॉयड, दूसरा आर्कियॉलोजिकल केमेस्ट्री और तीसरा हाई पॉलीमर्स पर छपा है।

प्रश्न : क्या आप किसी परिस्थिति विशेष या सुविधाओं का उल्लेख करना चाहेंगे जिसके कारण आप सेवानिवृत्त होने तक इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विभाग से ही सम्बद्ध रहे ?

स्वामी जी : मुझे अपने कार्य में रुचि थी, संतोष था और विश्वविद्यालय की नौकरी से अधिक कुछ सोचा ही नहीं। रुपये और पद का मोह मुझे था नहीं, लेखन और अनुसंधान से संतुष्ट था और यहाँ उसकी अच्छी सुविधा थी। इसीलिए कहीं नहीं गया। मुझमें कभी हीन भावना नहीं थी और किसी से ईर्ष्या भी नहीं थी सो मैं सदैव यहीं बना रहा। धर साहब ने प्रारम्भ से ही मुझे एम० एस-सी० पढ़ाने को दे रखा था। निश्चित पाठ्यक्रम कोई नहीं था। मैं जो चाहता था पढ़ाता था और संतुष्ट था।

प्रश्न : इधर नई पीढ़ी के रसायनविज्ञानियों में पुरानी पीढ़ी की अपेक्षा लगन की कमी दिखाई पड़ती है। इसके क्या कारण हो सकते हैं ?

स्वामी जी : लगन की कमी है, ऐसा मैं नहीं मानता ! शिक्षा का रूप ही बदल गया है। पहले लेक्चरर नियुक्त होता था, वही रीडर और प्रोफेसर होता था। अब सीधे प्रोफेसर की नियुक्ति की जाती है, यह गलत है। इस उल्टी प्रथा से नये लोग छोड़कर अन्यत्र चले जाते हैं।

प्रश्न : स्वामी जी ! अपने नई और पुरानी दोनों पीढ़ियों के वैज्ञानिकों और हिन्दी विज्ञान लेखकों को जाना-समझा है। क्या आप इस बात से सहमत हैं कि आज का उभरता हुआ वैज्ञानिक और हिन्दी विज्ञान लेखक विज्ञान के प्रचार-प्रसार की अपेक्षा अपने निजी हितों का अधिक ध्यान रखता है ?

स्वामी जी : पहले वैज्ञानिक और लेखक को पैसा तथा पुरस्कार नहीं मिलता था। वैसे पुरस्कारों का होना अनुचित नहीं है पर अब लोग पुरस्कारों की ओर भागते हैं। जीवन के मूल्य बदल गये हैं।

प्रश्न : नई पीढ़ी के और पुरानी पीढ़ी के हिन्दी विज्ञान लेखकों में क्या मौलिक अन्तर है ?

स्वामी जी : भारत के जीवन के सभी क्षेत्रों में जो जीवन मूल्य बदले हैं उसी का यह प्रभाव है। आज का दुर्भाग्य यह है कि हिन्दी में लिखा-पढ़ा नहीं जाता। लेखक अधिक हैं और पाठक कम। नया लेखक जो कलम उठाता है वह पिछला कुछ लेखन देखता नहीं। आज का हिन्दी लेखक विज्ञान को बिना समझे अनुवाद करता है। विषय को बिना समझे लिखता है। इसी कारण उसमें जटिलता है। अनूदित साहित्य का स्तर ठीक नहीं है। मेरी एक और शिकायत है। आज विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी साहित्यकारों का जो वर्चस्व है उसने हिन्दी का नुकसान किया है।

प्रश्न : आज एक विज्ञान शिक्षक अथवा अनुसंधानकर्त्ता को जो सुविधायें प्राप्त हैं उनसे क्या आप संतुष्ट हैं ?

स्वामी जी : आज इंग्लैंड जैसे देश भी यह महसूस करते हैं कि सुविधायें कम हैं।

आज विज्ञान इतने ऊँचे स्तर पर आ गया है कि कितनी भी सुविधायें हों, कम हैं। अपने देश में तो और भी कम हैं। बिना किसी बड़ी योजना और सहयोगपूर्ण सामंजस्य के सुविधा बढ़ नहीं सकती। माना अल्ट्रामाइक्रोस्कोप की ज़रूरत है, यह सभी को चाहिए। पर ऐसा हो नहीं सकता। सो सामंजस्य अवश्य चाहिए।

प्रश्न : पहले की अपेक्षा आज हिन्दी में विज्ञान की विविध शाखाओं की कई हज़ार पुस्तकें उपलब्ध हैं, ढेरों पत्र-पत्रिकायें हैं, हिन्दी भाषा के माध्यम से संगोष्ठियाँ आयोजित की जाती हैं, रेडियो और टेलीविज़न पर भी विज्ञान संबन्धी कार्यक्रम समय-समय पर प्रस्तुत किए जाते रहते हैं, फिर भी देश में वैज्ञानिक चेतना का अभाव दिखता है। इसके क्या कारण हो सकते हैं ?

स्वामी जी : विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी साहित्यकारों के वर्चस्व ने हिन्दी का बहुत अहित किया है। जैसे शब्दावली आयोग में हिन्दी और संस्कृत के लोग। विज्ञान के शब्द वैज्ञानिकों को ही बनाना चाहिए। शब्दकोष बनाने वालों ने हिन्दी विज्ञान लेखन की प्रगति में बाधा डाली है। वैज्ञानिक जब कुछ नया ढूँढ़ता है तो स्वयं उसकी शब्दावली बनाता है।

न्यूटन ने 'प्रिंसेपिया' लैटिन में लिखी, यह घोषित करते हुए कि अंग्रेज़ी सक्षम नहीं है। जर्मन, फ्रेंच सक्षम हैं। विक्टोरियन युग में इंग्लैंड में संस्कृति के लिए फ्रेंच और विज्ञान के लिए जर्मन भाषायें थीं। किन्तु विक्टोरियन युग में ही अंग्रेज़ों ने अपनी भाषा के अभाव को महसूस किया। सारे राष्ट्र ने अनुभव किया कि अंग्रेज़ी ऊपर आनी चाहिए, पर उन्होंने इसके लिये कमीशन नहीं गठित किया। बस अंग्रेजी में लिखना शुरू कर दिया। फलस्वरूप 100 वर्षों में वे सभी भाषाओं से बाजी मार ले गये। आज सारे संसार में अंग्रेज़ी का वर्चस्व है। हिन्दी के साथ भी जब तक यह नहीं होगा, स्थिति सुधरेगी नहीं। अंग्रेज़ों ने जो शब्द चाहे रखे और वे प्रचलित हो गये। आज हम विवाद में समय गँवाते हैं। हम कमीशन बनाते रहे, वातावरण नहीं बनाया। हिन्दी 1950 में राष्ट्रभाषा घोषित हुई थी। तब से लेकर अब तक हमने बहुमूल्य 38 वर्ष खो दिये।

प्रश्न : विज्ञान की एक ही शाखा में अनुसंधानरत वैज्ञानिकों में क्या आपसी ताल-मेल है ?

स्वामी जी : आपसी तालमेल का अभाव है। शोधकार्य समस्या पर नहीं होता, डिग्री-केन्द्रित है। किसी समस्या का समाधान मिले, इस पर बल नहीं दिया जाता। शोध छात्र को स्वयं नहीं पता कि वह करना क्या चाहता है। मात्र थीसिस प्रोड्यूसिंग (शोध ग्रन्थ तैयार करने की) कला है। इसका कारण एक तो साहित्य का अभाव है, दूसरे निगाहें डिग्री और नौकरी पर रहती हैं, तीसरे एक दूसरे से जल्दी आगे निकल जाने की भावना, ईर्ष्या-द्वेष है। यदि विदेश भी गये तो वहाँ से सीखकर कुछ नहीं लाये। जल्दी में उपाधि ली और वापस आ गये।

हम अपने देश में शोध तकनीक नहीं तैयार करते हैं इसी कारण अनुसंधान की स्थिति कमज़ोर रहती है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में पिछले 50 वर्षों से शोधकार्य हो

रहा है। किन्तु यहाँ कोई उपकरण नहीं बनाया गया। बाहर से उपकरण मँगाते रहे और काम करते रहे। उसके खराब हो जाने पर काम बन्द। होना तो यह चाहिए कि 75 प्रतिशत कार्य दूसरों की तकनीक पर हो और नया 25 प्रतिशत अपना हो। 25 प्रतिशत उपकरण और तकनीक नयी होनी चाहिए। इस प्रकार आगे चलकर तकनीक में सुधार होता जायेगा और अपनी तकनीक विकसित हो जायेगी। अपने यहाँ तकनीक नहीं विकसित हुई। यहाँ का विज्ञान आयातित है। अमेरिका और रूस आज मात्र इसी कारण आगे हैं कि उन्होंने नयी तकनीकें विकसित कीं।

प्रश्न : स्वामी जी ! आप विभिन्न वैज्ञानिक संगोष्ठियों, विज्ञान सम्मेलनों और अन्य विज्ञान सम्बन्धी कार्यक्रमों में जाते रहते हैं। वहाँ का वातावरण किस प्रकार का रहता है ?

स्वामी जी : ये संगोष्ठियाँ सैर-सपाटा और मैत्री के लिए होती हैं। आम वातावरण वहाँ लेन-देन का रहता है। एक बार मैं पेरिस गया था। वहाँ 'कैटेलिसिस' पर एक सम्मेलन होने वाला था। उस सम्मेलन को वहाँ के प्रधानमंत्री सम्बोधित करने वाले थे। मैं भी उन्हें सुनने के लिए उत्सुक था। उद्घाटन के समय प्रधानमंत्री ने अपने सचिव को 5 मिनट का वक्तव्य लिखकर दिया और उसे पढ़ दिया गया। सो सम्मेलन का वातावरण वैज्ञानिक ही बना रहा। हम अनुदानों के लिए शासन पर निर्भर रहते हैं इसलिए सारा ध्यान मुख्य अतिथि पर रहता है।

प्रश्न : क्या आप ऐसा सोचते हैं कि देश में विज्ञान शिक्षा पद्धति पर पुनर्विचार आवश्यक है ?

स्वामी जी : विज्ञान प्रगतिशील विषय है इस कारण पुनर्विचार आवश्यक है। विज्ञान के आधुनिकतम अनुसंधान का उपयोग करना आवश्यक है, न कि इतिहास का। नूतनतम पाठ्यविधि और अनुसंधान केन्द्र का ज्ञान होना ही चाहिए। जैसे मोटर का जो नवीनतम मॉडल हो वह हम बनायें। यह नहीं कि साइकिल बनाना हो तो पुराने मॉडल की बनायें। यही पाठ्यक्रम और परीक्षा पद्धति में भी होना चाहिए। जब मैं जर्मनी गया था तो सुनने में आया कि युद्ध में काफी कुछ ध्वस्त हो जाने से वे प्रसन्न थे क्योंकि उनकी इच्छा सुन्दर नये भवन बनाने की थी। अपनी मानसिक प्रवृत्तियों को भी हमें अपने उच्चतम इतिहास से अलग करके बनाना होगा। पुराना छोड़ना होगा, अतीत से निकलना होगा।

प्रश्न : क्या आप मानते है कि देश में जो भी वैज्ञानिक अनुसंधान हो रहे हैं उनका लाभ देश की आम जनता को नहीं मिल रहा है और क्या इसके लिए किसी सीमा तक भाषा भी दोषी है ?

स्वामी जी : लाभ नहीं मिल रहा है, यह तो निश्चित है। हमारे उद्योगपति और सरकार दोनों का विश्वास है कि विज्ञान आयातित करने की वस्तु है। उदाहरण के लिए पारिभाषिक शब्द वही लोग बना सकते हैं जो उस विषय का लेखन, अनुसंधान या शिक्षण

करते हैं। अन्य लोगों से पारिभाषिक शब्द नहीं बनवाना चाहिए। हमारे यहाँ पारिभाषिक शब्दों का कार्य कृत्रिम शैली पर चला, स्वाभाविक शैली पर नहीं। जिन्होंने लेखन, अध्यापन और अनुसंधान किया उन्होने नहीं बनाया। हमारा विज्ञान ही कृत्रिम शैली पर रहा क्योंकि माँगे का रहा। यूरोप के अनेक देशों में अनेक भाषायें हैं। वहाँ जनता तक आविष्कार पहुँचते हैं और उन्हें लाभ मिलता है। यहाँ भी प्रयत्न करने पर ऐसा ही हो सकता है।

प्रश्न : क्या आप इस विचार से सहमत हैं कि इस देश में आम जनता के बीच वैज्ञानिकों को वह प्रतिष्ठा नहीं प्राप्त है जितनी कि कुछ विकसित देशों में ?

स्वामी जी : विज्ञान अभी अपने देश में जनजीवन का आवश्यक अंग नहीं बना है। पुराने ढाँचे का विज्ञान और दर्शन अभी भी हमारे जीवन का अंग हैं इस कारण वैज्ञानिकों को जो प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए, अपने देश में नहीं मिली।

प्रश्न : आज के आम आदमी के लिए विज्ञान आकर्षक, उपयोगी और स्वीकृत हो, इस सम्बन्ध में आपके क्या सुझाव हैं ?

स्वामी जी : हम अपनी पुरानी रूढ़ियों का त्याग करें। जिस प्रकार हमने बाज़ारों में बिकने वाले वैज्ञानिक स्रोतों से उपजी नवीनतम वस्तुओं यथा टी० वी०, वीडियो आदि को स्वीकार किया है उसी तरह नवीनतम वैज्ञानिक विचारों को भी स्वीकारें। जब तक देश रूढ़ियों का उपासक और अपनी भूतकाल की गरिमा पर ही सन्तुष्ट है तब तक कल्याण नहीं हो सकता। हम दो नावों पर पैर नहीं रख सकते। पुरानापन, पोंगापन त्यागना होगा।

प्रश्न : पूरे देश में विज्ञान के प्रचार-प्रसार के लिए हिन्दी के अतिरिक्त भी क्या कोई भाषा सक्षम है ?

स्वामी जी : संसार में सभी भाषायें सक्षम होती हैं। जो भाषा, दर्शन, अर्थशास्त्र, आदि उपांगों के लिए सक्षम है, विज्ञान के प्रचार-प्रसार के लिए भी सक्षम हो सकती है। बाहर अन्य देश अपनी-अपनी भाषाओं के माध्यम से आगे बढ़ रहे हैं। भाषा का आधार सर्वनाम और क्रियायें हैं, संज्ञायें नहीं। इसलिए प्रत्येक भाषा ही अपने स्वरूप को अपरिवर्तित रखते हुए प्रत्येक शास्त्र का माध्यम बन सकती है। यानी भाषाओं में अपनी क्रियायें भी होती हैं। इस दृष्टि से हिन्दी निर्धन भाषा है। हिन्दी में करना और होना क्रिया से हम सभी कुछ बना लेते हैं। हिन्दी में ठेठ क्रियाओं का तो नितांत अभाव है।

प्रश्न : क्या आप कुछ ऐसे वैज्ञानिकों या विज्ञान सेवी संस्थाओं का नाम लेना चाहेंगे जिन्होंने देश में वैज्ञानिक मनोवृत्ति पैदा करने की दिशा में कुछ उल्लेखनीय कार्य किया हो ?

स्वामी जी : विज्ञान परिषद्, प्रयाग जैसी संस्थाओं ने यह विश्वास दिलाया है कि हिन्दी में कार्य हो सकता है। बंगला भाषा ने भी ऐसा ही किया। टैगोर ने भी बंगला में विज्ञान की पुस्तक 'सृष्टि रचना' लिखी। बाद में अन्य भाषाएँ भी सामने आईं। हिन्दी सक्षम है पर पढ़ने वाले कम हैं। दक्षिण में वहाँ की भाषाओं की पत्रिकाओं की लाखों प्रतियाँ छपती हैं। पर हिन्दी वालों का अंग्रेज़ी मोह अभी भी नहीं गया है। वैज्ञानिक

शब्दों के निर्माण पर जितना वाद-विवाद हिन्दी में हुआ है, अन्य भाषा में नहीं। हिन्दी-उर्दू का विवाद इसका ज्वलंत उदाहरण है। इस युग से पूर्व या आज भी अच्छे वैज्ञानिक में उसकी मातृभाषा में रुचि रही है। पर दुर्भाग्य से हिन्दी क्षेत्रों में अच्छे वैज्ञानिक हुए ही नहीं और जो हुए भी उन्होंने हिन्दी विज्ञान में सक्रिय रुचि नहीं ली। जो हिन्दी में विद्वान हुए वे विज्ञान में रुचि नहीं रखते थे। हिन्दी लेखन में भौतिकी और रसायन में निहालकरण सेठी और प्रो० फूलदेव सहाय वर्मा का नाम लिया जा सकता है, पर अपने विषय के ये शीर्ष के वैज्ञानिक नहीं थे।

प्रश्न : युवा वैज्ञानिकों और विज्ञान लेखकों को आप क्या सन्देश देना चाहेंगे ?

स्वामी जी : अपने-अपने विषय में अनुसंधान के क्षेत्र में यशस्वी हों और अपने-अपने स्तर पर हिन्दी साहित्य को भी अपनी वैज्ञानिक कृतियों से अलंकृत करें।

प्रश्न : स्वामी जी ! आप शिखर के वैज्ञानिक और विज्ञान लेखक होने के साथ-साथ आर्य समाज के ख्याति प्राप्त समर्पित प्रचारक हैं। आपने देश-विदेश का भ्रमण किया है। ईश्वर में आपकी गहरी आस्था है। आप संन्यासी हैं। क्या विज्ञान और धर्म एक दूसरे के विरोधी नहीं हैं ?

स्वामी जी : यदि विरोधी रहेंगे तो वह धर्म धर्म नहीं है और वह विज्ञान विज्ञान नहीं है। प्रत्येक धर्म के दो स्वरूप होते हैं। एक नैतिकतामूलक और दूसरा शास्त्रमूलक। नैतिकता मूलक स्वरूप शाश्वत और मनुष्य मात्र के लिए एक सा है। नैतिकता में सिद्धांत विकास से नहीं, मनुष्य को जीवन के प्रारम्भ से प्राप्त हैं। धर्म का जो शास्त्रीय स्वरूप है वह प्रत्येक युग में बदलता है और उतना ही मान्य है जितना ही वह उस युग के विज्ञान से पोषित है। इसलिए धर्म और विज्ञान या आस्तिकता और विज्ञान में विरोध नहीं। जो आस्तिकता विज्ञान द्वारा पोषित है वही सच्ची आस्तिकता है। अंधविश्वास पर जो पोषित है वह छलछद्म है। इस दृष्टि से मुझे विज्ञान में और महाभारत से पूर्व पोषित धार्मिक परम्पराओं में आस्था रही है। वैदिक विचारधारा का होने के कारण विज्ञान और विज्ञान से पोषित आस्तिकता पर मेरी पूर्ण आस्था है और उसके द्वारा पोषित आस्तिकता में मुझे पूरी श्रद्धा है।

अंतिम प्रश्न : आप आपने जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि क्या मानते हैं ?

स्वामी जी : मेरे जीवन की उपलब्धि यह है कि मैंने अपनी समस्त प्रतिभाओं और रुचियों को प्रभु का प्रसाद माना है और जो कुछ मैं था उन क्षेत्रों में आत्मविश्वास के साथ काम किया। कुछ सफलतायें भी प्राप्त कीं। किसी भी क्षेत्र में हीनता की भावना मुझमें कभी भी नहीं रही किन्तु प्रथम कोटि की सफलता किसी भी क्षेत्र में नहीं रही। प्रथम कोटि का व्यक्ति मैं किसी भी क्षेत्र में नहीं रहा। तृतीय कोटि का सभी क्षेत्रों में कहा जा सकता है। मैं कला विहीन हूँ। संगीत में रुचि नहीं रही। मैंने किसी भी क्षेत्र में पद और प्रतिष्ठा के लिए कभी प्रतियोगिता नहीं की। आर्य समाज के क्षेत्र में तो सदस्य मात्र रहा। इसी दृष्टि से मैं संन्यासी हूँ। मैं अपनी कमज़ोरियों के साथ सहज जीवन जीता हूँ। अब मैं कोई भी पद स्वीकार नहीं करूँगा। बस इसे ही चाहो तो मेरी उपलब्धि मान लो। □□

सहस सरद आ-आ लें बलैया तुम्हारी

विश्वभर प्रसाद "गुप्त बन्धु", एफ० आई० ई० (इं०) विशारद (द्विक)
आनरेरी तकनीकी संपादक (हिन्दी), इंस्टिट्यूशन आफ़ इंजीनियर्स (इं०)
बी–154, लोक विहार, पीतमपुरा, दिल्ली—110034

हाँ, हज़ार शरद-ऋतुएँ आ-आकर तुम्हारी बलैया लेती रहें। हज़ार ही क्यों ? अमृत-जयंती जिसकी हम मना रहे हैं, वह अमर हो, ऐसा आशीर्वाद दें अपनी विज्ञान-परिषद् को।

किन्तु हम होते कौन हैं आशीर्वाद देने वाले ? पचहत्तर शरद झेल चुकने वाले को कोई अनुज (लेखक ने हाल ही में अपने सत्तर वर्ष पूरे किए हैं) आशीर्वाद कैसे दे सकता है ? परिषद् तो अग्रज, नहीं नहीं, अग्रजा है (क्योंकि वैयाकरणों ने परिषद् को स्त्रीलिंग घोषित कर रखा है); और फिर अनुजा ही होती, तब भी तो (भारतीय संस्कृति में पलकर हमें) उसके पैर ही पूजने थे। इसलिए हम विज्ञान परिषद् की सेवा करके, उसकी पाद-वंदना करके कृतार्थ ही हो सकते हैं; अतः कामना करते हैं कि परिषद् अमर हो, तथा हमको यावज्जीवन उसकी अधिकाधिक सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहे; और ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि हमारी यह कामना पूर्ण करें।

यह कोई उपहास नहीं, गम्भीर आकांक्षा है, और एक प्रामाणिक तथ्य भी, कि जिन प्रातः स्मरणीय देश-वंद्य ऋषियों-मनीषियों ने परिषद् की स्थापना की थी, और फिर जिन्होंने उसका पोषण तन-मन-धन से किया, वे सब हमारी श्रद्धा के पात्र रहे हैं, हैं और रहेंगे; और सदा ही सभी वैज्ञानिकों एवं सर्व-साधारण के लिए भी शिरसा प्रणम्य, मनसा सुचिन्त्य, वाचा स्तुत्य एवं कर्मणा अनुकृत्य बने रहेंगे। जहाँ परिषद् की 'विज्ञान' पत्रिका को सभी वैज्ञानिक और तकनीकी पत्रिकाओं में अग्रजन्मा होने का श्रेय है (शायद नई दिल्ली की 'आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका' को छोड़कर), वहाँ इससे भी कोई इनकार नहीं कर सकता कि हिन्दी में इस समय प्रकाशित सभी वैज्ञानिक एवं तकनीकी पत्र-पत्रिकाओं में से (जिनकी संख्या सी० एस० आई० आर० की निर्देशिका के अनुसार लगभग 321 है), अधिकांश की प्रेरणा-स्रोत भी 'विज्ञान' पत्रिका ही रही है। सभी के मनीषी संस्थापक, संचालक, सम्पादक आदि इस परिषद् से या पत्रिका से लेखक-पाठक आदि किसी न किसी रूप से जुड़े अवश्य रहे हैं।

इंस्टिट्यूशन आफ़ इंजीनियर्स (इण्डिया) के विषय में तो, (जिसकी स्थापना 1920 ई० में हुई थी), लेखक आधिकारिक रूप में यह कहकर गौरवान्वित अनुभव करता है कि जिन भविष्य-द्रष्टा और उदार-चेता इंजीनियरों ने भारतीय संविधान में हिन्दी राष्ट्र-

भाषा स्वीकृत होते ही, स्वतन्त्रता के स्वर्णिम प्रभात में 1949 से ही इंस्टिट्यूशन के जरनल का एक खण्ड हिन्दी में प्रकाशित करना आरम्भ कर दिया था, वे 'विज्ञान' से न केवल प्रभावित थे, बल्कि इसके नियमित और जागरुक पाठक भी थे। उस समय हिन्दी विभाग के प्रथम सम्पादक बने थे महाराष्ट्र प्रान्त के अवकाश प्राप्त सुपरिटेंडिंग इंजीनियर श्री नरहरि सदाशिव जोशी, जिन्होंने 1955 में हिन्दी जरनल के सम्पादन का कार्य-भार पंजाब के अवकाश-प्राप्त चीफ इंजीनियर श्री व्रजमोहन लाल को सौंपा। श्री लाल ने हिन्दी विश्वविद्यालय प्रयाग (हिन्दी साहित्य सम्मेलन) की मध्यमा परीक्षा उत्तीर्ण कर सबसे पहिले बैच में 'विशारद' की उपाधि प्राप्त की थी। वे 'विज्ञान' के नियमित पाठक थे। उनके सम्पादन में 'विज्ञान' द्वारा प्रवर्तित विज्ञान-लेखन की शैली की छाप स्पष्ट देखी जा सकती है। शोध निबन्धों के लिए 'विज्ञान-परिषद् अनुसंधान पत्रिका' का प्रकाशन 1958 में आरम्भ हुआ। उसने इंस्टिट्यूशन द्वारा हिन्दी शोध-निबन्धों के प्रकाशन को एक निश्चित दिशा दी।

सन् 1965 से इंस्टिट्यूशन के हिन्दी जरनल का सम्पादन-भार लेखक पर आया जिसकी जन्म-भूमि अन्तर्वेद और कर्म-भूमि दिल्ली के बाद मुख्यतया इलाहाबाद ही रही है। यहाँ वह हिन्दी साहित्य सम्मेलन और विज्ञान परिषद् के निकट सम्पर्क में रहा। जरनल के निखार में और इसके विशेषांकों की योजना कार्यान्वित करने में विज्ञान परिषद् का और उसके सम्पादकों का सक्रिय सहयोग मिलता रहा है। 'विज्ञान' ने विज्ञान-लेखन की जो शैली प्रस्तुत की, जो मानक निश्चित किए और शोध-कार्य की जो भाषा विकसित की, उससे इंस्टिट्यूशन आफ़ इंजीनियर्स ने भरपूर लाभ उठाया। विज्ञान के बहुत से लेखक तैयार करने, शोध-कार्य की दिशा सुझाने एवं शोध-ग्रन्थ प्रकाशित करने-कराने का श्रेय निर्विवाद रूप से परिषद् को है। इसी भाँति इंस्टिट्यूशन आफ़ इंजीनियर्स के जनरल के हिन्दी विभाग ने भी हिन्दी में इंजीनियर लेखक, शोध-कर्ता, और शिक्षक तैयार किए हैं, तकनीकी शब्दावली और तकनीकी विषयों की एक भाषा-शैली पुष्ट की है। इसी का परिणाम है कि आज हिन्दी में इंजीनियरी की हज़ारों पुस्तकें उपलब्ध हैं, अनेक शोध-निबंध हिन्दी में हैं और हिन्दी में इंजीनियरी शिक्षा अत्युच्च स्तर तक सम्भव है। इस सबके आधार में झाँककर देखा जाए तो विज्ञान परिषद् द्वारा प्रस्तुत मार्ग-दर्शन साफ झलकता है। ऐसी विज्ञान परिषद् की जय हो, जय हो।

कारज की जोत सदा ही जरे

श्यामशरन विक्रम

68, असिस्टेन्ट लाइन बिरला नगर

ग्वालियर–474004

आज जो युवा पीढ़ी तेईस वर्ष की है, उसका बीजारोपण उन वर्षों में हुआ होगा जब कि यह बात है—कहिये, 1964-65 की।

मेरा विज्ञान लेखन सूर्य तब मध्याह्नोन्मुखी था; और था, विज्ञान परिषद् तथा

डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से नया-नया दुआ सलाम । एक यह भी अन्तर अभिलाषा करवटें बदल रही थी कि मिश्रजी से कभी चाय की मेज़ पर आमने-सामने हुआ जा सके ! मैं आगरा, वे इलाहाबाद !! फिर भी मेरे उस दिवा स्वप्न को यकायक सूझी सार्थक होने की और मेरे अनुरोध की लाज रखने हेतु एकाध विज्ञान-सेमिनार से लौटते मिश्र जी, दो-चार मित्रों, शिष्यों सहित आगरा फोर्ट स्टेशन पर प्रतीक्षारत मुझ विक्रम से मिले; यात्रा का खंड विभाजन किया और विदुर घर साग.........की मिसाल प्लेटफार्म पर ही मेरा रुखा-सूखा आतिथ्य यों स्वीकार किया मानो श्री राम भीलनी के जूठे बेर ग्रहण कर रहे हों ।

परिचय, निकट से निकटतर; प्रगाढ़ से प्रगाढ़तर होने के नाट्य प्रसंग-मंच से उस दिन जो पर्दा उठा सो उठा ही उठा आज भी हम दोनों को अपनी छत्रछाया दे रहा है, पाँच-छ: दशक पुरातन विज्ञान प्रचारिणी संस्था, यह विज्ञान परिषद् और इसकी मासिक तथा त्रैमासिक पत्रिकायें—'विज्ञान'—उस दौर तक (पचास वर्ष की होने तक) अपनी असंदिग्ध प्रतिष्ठा और पहिचान स्थापित कर चुकी थी, उन दिनों सिरमौर डॉ० स्वामी सत्यप्रकाश जी तथा शिवगोपाल मिश्र जी के नाम विशिष्ट आदर और गौरव से लिये जाते थे।

तब से यहाँ तक के हमसफर के दौरान मासिक 'विज्ञान' इस विक्रम को क्षुद्र सेवायें देने के अवसर प्रदान करता रहा है । साथ ही यह भी कि चुन-चुन माटी महल बनाया की मानिन्द उदार मार्गदर्शन तथा स्नेहयोग देते हुए विक्रम की लेखकीय अतिक्षुद्र प्रतिभा को निखरा है, सँवारा भी है ।

राष्ट्रीय स्तर की बात करें तो जहाँ भारत-प्रसिद्ध इण्डियन साइन्स कांग्रेस पहले प्रसिद्धि, बाद में विज्ञान-प्रसारण, सो भी विशुद्ध तकनीकी, क्षेत्र में अपना अग्रस्थान बनाये हुए है; वहाँ लोकप्रियता के सुबोध स्तर पर विज्ञान के प्रचार-प्रसार में प्रथम स्थान-सम्पन्न और प्राचीनतम संस्था यही विज्ञान परिषद् है, इसके नामोल्लेख का अपना अनोखा ही गौरव है क्योंकि इसका लक्ष्य रहा है, पहले काम, बाद में नाम ।

डॉ० स्वामी सत्यप्रकाशजी के स्वर्ण योग से जो प्रतिष्ठा इस परिषद् को, इसकी कार्य श्रृंखला को तथा इससे सम्बद्ध विद्वान विज्ञानवेत्ताओं को मिलती रही है, उसका अपना गौरवमय अतीत तो है ही, भविष्य भी अति उज्ज्वल है ।

मेरा, आज 73 वर्षीय आयु में भी इससे नाता-रिश्ता एक विरल गौरव है, अमृत कल्पतरु की भाँति यह रिश्ता फलता-फूलता रहे, यही आकांक्षा और यही विनयगर्भा शुभाकांक्षा भी कि—

कारज की जोत सदा ही जरे ।

विज्ञान परिषद् : भारत का मिशनरी विज्ञान मन्दिर

प्रेमानन्द चन्दोला

ई–1 साकेत, एम० आई० जी० फ्लैट, नई दिल्ली 110017

अमृतोत्सव के उपलक्ष्य में विज्ञान और हिन्दी को समर्पित "विज्ञान परिषद्" के प्रति संस्मरणात्मक उद्‌गार अभिव्यक्त करने वाले इन क्षणों में मुझे आनन्द का अनुभव हो रहा है। विज्ञान परिषद् में निश्चित रूप से विज्ञान, महर्षि दयानन्द तथा प्रयाग नामक तीन शब्द संकल्पनाओं की त्रिवेणी बहती है। यूं तो प्रयाग स्वयं एक प्राचीन महातीर्थ है किन्तु प्रयाग की इस परिषद् का परिसर भी विज्ञान तीर्थ है, जिसके मन्दिर में विज्ञान और हिन्दी की अखंड ज्योत जल रही है। इसमें अनेक वैज्ञानिक पुजारी बदलते रहे हैं किन्तु लौ निरन्तर उसी तरह जाज्वल्यमान है। इस सन्दर्भ में बेहिचक कहा जा सकता है कि इसका श्रेय अनेक समर्पित इकाइयों को है जिनके अनथक, निस्वार्थ और निश्छल परिश्रम से विज्ञान की धारा प्रवहमान है। यहाँ पर विश्वास करना पड़ता है कि टीम भावना में कितनी असीमित शक्ति होती है और आपसी निष्काम तालमेल से कितनी बड़ी बातें स्वतः होती चली जाती हैं।

आये दिन संस्थाएँ बनती-बदलती रही हैं लेकिन किसी संस्था के लिए 75 वर्ष की अवधि को अबाध गति से पार करना निश्चय ही गौरव और प्रशंसा की मद है। इस परिषद् के मुख-पत्र 'विज्ञान' की इतनी लम्बी विकास यात्रा स्वयं ही अपनी कहानी कहती है। इस मुखरित साक्ष्य के बाद कुछ कहना सूर्य को दीपक दिखाना है। इस प्रकार भारत में 'विज्ञान' आज की आधुनिक विज्ञान पत्रिकाओं का जीवित पितामह हैं और पितामह किसी भी स्वरूप में हो वह वंदनीय, पूजनीय और अभिनन्दनीय होता है। इसी तरह परिषद् की 'अनुसंधान पत्रिका' भारतीय भाषाओं की उच्च स्तरीय पहली त्रैमासिक शोध पत्रिका है।

अनेक वैज्ञानिकों ने इस संस्था को बनाया किन्तु इसने भी अनेक पात्रों को लेखक, सम्पादक तथा सुपात्र बनाकर मंचस्थ, प्रतिष्ठित और सम्मानित किया है। इस जागरूक संस्था के अनेक चर्चित कार्यकलाप रहे हैं – जैसे पत्रिकाएँ निकालना, विशेषांक निकालना, वैज्ञानिकों के व्याख्यान करवाना, विज्ञान पर बहुआयामी ग्रन्थ प्रकाशित करना, विभिन्न विषयों पर संगोष्ठियाँ आयोजित करना, नगर में आए विद्वानों के व्याख्यान करवाना, नवोदित लेखकों को प्रोत्साहित करना, कसौटी पर कसकर विज्ञान लेखकों को सम्मानित

करना, अन्य संस्थाओं व व्यक्तियों को सहयोग देना वगैरह-वगैरह। सबसे बड़ी उपलब्धि तो इसकी यह है कि नगर के केन्द्रीय स्थल पर इसका अपना भव्य भवन और विशाल परिसर है। इस भवन में इसका पुस्तकालय, गोष्ठी-भवन, विशाल ऑडिटोरियम, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का कार्यालय तथा विश्राम-कक्ष आदि हैं। इसका ऑडिटोरियम नगर के विविध आयोजनों और सभाओं के निमित्त बहुत उपयुक्त केन्द्र है। यह मैं कैसे भूल सकता हूँ कि इसी ऑडिटोरियम में मुझे भी विज्ञान लेखक के रूप में सम्मानित किया गया था। मेरे लिए वे क्षण अविस्मरणीय हैं, स्मृति में संजोने योग्य हैं।

75 वर्षों के लम्बे अन्तराल को देखते हुए 'विज्ञान' और विज्ञान परिषद् से सम्बद्ध सभी की सूची से तो पन्ने रंग जाएँगे, वैसे यह सूची अन्यत्र देखने को मिलेगी ही, परन्तु जिन सक्रिय इकाइयों से मेरा व्यक्तिगत सम्पर्क रहा है और जिनकी गतिविधियाँ मेरी निगाहों से गुजरी हैं उनका उल्लेख करना बेमानी नहीं होगा। डॉ० शिव गोपाल मिश्र परिषद् में अनेक वर्षों से सम्पादक, प्रधान मन्त्री आदि अनेक पदों पर कार्य करते रहे हैं और अभी भी प्रबन्ध सम्पादक तथा कर्मठ कर्णधार के रूप में परिषद् को सुशोभित किए हुए हैं। डॉ० जगदीश सिंह चौहान कई वर्षों तक "विज्ञान" का सम्पादन सूझ-बूझ से करते रहे हैं। वर्तमान सम्पादक श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव आज पत्रिका को नया आयाम, नई दिशा देने के लिए व्यग्र हैं। प्रो० पूर्णचन्द्र गुप्त पहले परिषद् के कोषाध्यक्ष थे तो अब प्रधान मन्त्री हैं। इसी तरह अन्य सक्रिय कार्यकर्ताओं में, मेरी आँखों के सामने, डॉ० दुबे, डॉ० अशोक कुमार गुप्ता और युवा श्री अनिल कुमार शुक्ल की छवियाँ मूर्तिमान हो जाती हैं। परिषद् को स्वामी (डॉ०) सत्यप्रकाश सरस्वती सरीखे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के वैज्ञानिक और विद्वान का वरद हस्त तो प्राप्त रहा ही है और डॉ० रामदास गौड़, आचार्य रामचरण मेहरोत्रा, प्रो० रामदास तिवारी, डॉ० खानखोजे आदि भी इससे लम्बे समय तक जुड़े रहे हैं। वयोवृद्ध होने के बावजूद भी कार्यालय प्रभारी के रूप में तिवारी जी परदे के पीछे से अभी भी एकनिष्ठ होकर परिषद् परिवार का सेवा कार्य अपने गृह कार्य की तरह निभा रहे हैं।

गायें घास चरकर जिस तरह संध्या की गोधूलि बेला में खुर बजाते और धूल उड़ाते हुए घर की ओर आती हैं उसी तरह परिषद् की ये कार्यशील इकाइयाँ अपने दैनिक व्यावसायिक सेवा कार्य के उपरान्त शाम को पैदल अथवा साइकिलों और स्कूटरों पर सवार होकर परिषद् रूपी घर में प्रविष्ट होकर नियमित रूप से अवैतनिक तथा मिशनरी कार्य में कार्यरत हो जाती हैं। यह दृश्य मैंने एक बार नहीं कई बार देखा है और इन कर्म-वीरों को सराहा है मन में। यदि देखा न होता तो कैसे बाँध पाता इन दृश्यों को इन शब्दों में। इसीलिए जब भी मैं इलाहाबाद जाता हूँ प्रत्येक दिन मेरे पाँव इस कर्मस्थली की ओर जाने को ललक पड़ते हैं। फिर पारस्परिक संवाद और वार्तालाप से एक दूसरे को इधर-उधर की, यहाँ और वहाँ की जानकारी प्राप्त हो जाती है कि कहाँ क्या हो रहा है। आज के भौतिकवादी युग में ऐसा सौहार्द, सामंजस्य और सहयोग अन्यत्र सचमुच ही अलभ्य है, कम से कम महानगरों और बड़े नगरों में, क्योंकि आज मानव भावनाओं से रीता जो हो गया है और भावनाएँ मरती जा रही हैं।

संस्मरणों में प्रत्यक्ष जैसा ही चित्रण किया जाता है। यह ज़रूर है कि उसमें लिप्त व्यक्ति की आत्मा अवश्य मिश्रित होती है। इस तरह मेरे और परिषद् के बीच के व्यक्तिगत तथा संस्थागत मधुर सम्बन्धों ने ही गड्ड-मड्ड होकर इन संस्मरणों का ताना-बाना बुना है।

मुझे नहीं भूलता कि जब मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के कार्यशाला प्रबन्धक की हैसियत से शब्दावली कार्यशाला आयोजित करने के सिलसिले में इलाहाबाद गया था तो परिषद् के विभिन्न पदाधिकारियों ने किस तरह पग-पग पर मुझे व शब्दावली आयोग को हर प्रकार का सहयोग दिया था। प्रो० पूर्णचन्द्र गुप्त ने अपने पुत्री के विवाह कार्य में व्यस्त होते हुए भी रसायन कार्यशाला के आयोजन, उसका संचालन करने, तत्कालीन कुलपति प्रो० टी० पति से कार्यशाला कार्यक्रम निर्धारित कराने, उद्घाटन स्थल की व्यवस्था कराने, युनिवर्सिटी गेस्ट हाउस में आवास व्यवस्था कराने आदि में जो सहयोग दिया था वह शब्दातीत है। उनकी महानता रही कि वे मेरे साथ यहाँ-वहाँ एक बच्चे की तरह चल रहे थे।

इस अवसर पर शब्दावली आयोग की पुस्तक प्रदर्शनी भी परिषद् के भवन में ही लगी थी और इसका उद्घाटन तत्कालीन प्रधानमन्त्री डॉ० शिव गोपाल मिश्र ने किया था। हमारे कुछ कर्मचारी परिषद् भवन के ही विश्राम-कक्षों में रहने का आरामदायक स्थान पा सके थे। उस समय जब कि प्राणिविज्ञान, गणित और वनस्पति विज्ञान कार्यशालाएँ विश्वविद्यालय के इन्हीं विभागों में सम्पन्न हो रही थीं, लेकिन रसायन कार्यशाला कक्ष में लगे ताले के कारण हुई परेशानी में परिषद् ने ही हमें रसायन कार्यशाला के लिए अपना कक्ष सहर्ष दिया था।

अब मेरे सामने तस्वीर घूम रही है शब्दावली कार्यशाला के समापन समारोह की, जबकि राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति प्रो० ए० बी० लाल ने समापन समारोह के मुख्य अतिथि के रूप में अपनी सहमति हमें दे दी थी, किन्तु वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के परिसर में पाँव रखने को कतई राजी नहीं थे। ऐसे मौके पर हमें कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या किया जाय। लेकिन परिषद् के ऑडिटोरियम के लिए वे सहमत हो गये और इस तरह उस समय भी परिषद् ने ही हमें उबार कर हमारी लाज रखी। इसे मैं कैसे भूल सकता हूँ और इसके लिए मैं तथा शब्दावली आयोग विज्ञान परिषद् के सदैव आभारी और ऋणी रहेंगे। यह भी बतला दूँ कि जिस ऑडिटोरियम का कुछ घन्टों का किराया ही काफी अधिक होता है उसी आडिटोरियम और अपने अन्य कक्षों को कई दिनों के लिए परिषद् ने हमें निःशुल्क प्रदान किया था। शैक्षिक आयोजनों में परिषद् के पदाधिकारियों की इस उदारता और सदाशयता का शब्दों में वर्णन नहीं किया जा सकता। तभी तो परिषद् भवन में घर का सा आत्मीय वातावरण मिलता है जो हृदय के तारों को झंकृत कर और कोने-कोने को छूकर अभिभूत कर देता है। इन बातों को व्यक्ति और संस्थाएँ भला कहीं भूल सकती हैं। ये कुलीन-संस्कार आज के युग में वस्तुतः प्राचीन पौर्वात्य भारतीय गुरुकुल परम्परा के सहज संस्कारों का दिगदर्शन कराते हैं।

यूँ तो और भी अनेक बातें हैं लेकिन इस समय दिमाग में रील के चलते हुए सार-रूप में ये मूल संस्मरण अनुप्रस्थ काट में एक संस्था के लगभग सभी पहलुओं को उजागर कर देते हैं। पके भात को परखने के लिए चावल का एक दाना ही काफी होता है, फिर मैंने तो कई दाने चखकर देखे हैं।

मुझे पूरी आशा है कि भविष्य में भी विज्ञान परिषद् इसी भावना से कार्यरत रहकर विज्ञान जगत् को आलोकित करती रहेगी।

अन्त में, 'अमृत जयन्ती' के अवसर पर "विज्ञान परिषद्" को नमन और कोटिशः प्रणाम।

मेरे संस्मरण

डॉ० महेन्द्र सिंह वर्मा

उपाचार्य, रसायन प्राध्ययन केन्द्र, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

सन् 1965 में, जब मैं कक्षा 10 में था, मैंने अपने विद्यालय, 'ब्रज आदर्श इण्टर कॉलेज, माँट (मथुरा)' की वार्षिक पत्रिका 'ब्रज माधुरी' के लिए 'सूरज की शक्ति' नामक लेख लिखा था। उसके पीछे मेरे हिन्दी और संस्कृत के अध्यापक श्री गोस्वामी जी की प्रेरणा थी। इस लेख को पढ़कर मेरे अन्य अध्यापकों तथा अन्य परिचितों ने मेरी काफी प्रशंसा की जिससे हिन्दी में लेख लिखने की इच्छा मेरे दिल में 'घर कर गई'। फिर भी संयोग ऐसा हुआ कि न तो मैं अपने इण्टर कॉलेज, 'राष्ट्रीय कॉलेज गया, (मथुरा) की वार्षिक पत्रिका के लिए कुछ लिख पाया और न बी० एस-सी० के समय अपने विश्वविद्यालय, 'इलाहाबाद विश्वविद्यालय' की पत्रिका के लिए।

एम० एस-सी० में (1969-70) जाने पर डॉ० लक्ष्मीकांत सिंह (जो आजकल फैज़ाबाद विश्वविद्यालय में भौतिकी के उपाचार्य हैं और उस समय डॉ० हरी मोहन के साथ इलाहाबाद विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में शोधरत थे) से पता चला कि यहाँ एक 'विज्ञान परिषद्, प्रयाग' नाम की संस्था है जो हिन्दी में विज्ञान के विषयों को प्रोत्साहन देने के लिए बनाई गई है। इसकी पत्रिका 'विज्ञान' हिन्दी में लोकप्रिय वैज्ञानिक लेख छापती है और 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' में शोधपत्र हिन्दी में छापे जाते हैं। 'विज्ञान' के सम्पादक उस समय डॉ० हरी मोहन हैं और 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' के प्रोफेसर सत्यप्रकाश थे।

सन् 1970 में, मैंने डॉ० सिंह की प्रेरणा से 'विज्ञान' के लिए एक लेख भी लिखा था जो प्रकाशित नहीं हो पाया था। इससे मुझे काफी निराशा भी हुई और साथियों ने हँसी भी उड़ाई।

फिर मैं अपनी रिसर्च में व्यस्त हो गया। उस दौरान कभी-कभी 'साहित्य सर्वे' के लिए परिषद् के भवन में आना होता था क्योंकि बहुत सारे जर्नल जो विभाग में नहीं आते थे, यहाँ आया करते थे। यहाँ डॉ० शिवगोपाल मिश्र अक्सर परिषद् के किसी न किसी काम में लगे मिलते थे। डॉ० मिश्र का हिन्दी प्रेम और विज्ञान लेखन में हिन्दी के प्रति

समर्पण, वास्तव में प्रशंसनीय और उल्लेखनीय है। वे अक्सर मुझे हिन्दी विज्ञान के लेख लिखने के लिये प्रेरित किया करते थे, लेकिन मैं जब-जब लिखने की सोचता तो डर सताने लगता कि फिर गलतियाँ होंगी और लोग फिर हँसी उड़ायेंगे। फलस्वरूप, कुछ भी नहीं लिख पाता था।

1979 जुलाई में नौकरी की आवश्यकता यहाँ उज्जैन खींच लाई। यहाँ रसायन अध्ययनशाला में प्रवक्ता के पद पर नियुक्ति मिल गई। अध्ययनशाला में ही डॉ० सुरेश चन्द्र आमेटा से मुलाकात हुई। वे उस समय यहाँ शिक्षक शोध छात्र थे। डॉ० आमेटा की हिन्दी में लिखित दो रसायन की पुस्तकें हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, लखनऊ से पुरस्कृत हो चुकी हैं। उन्होंने कई लेख और कहानियाँ लिखी हैं। वे सम्भवत 'विज्ञान' के सह-संपादक भी रह चुके हैं। उनकी ही सलाह और प्रेरणा से मैंने अपना एक शोधपत्र "ऐक्वोनिकिल (ii) संकर का विभिन्न आधार विद्युत अपघट्यों में बिन्दुपाती पारद इलेक्ट्रोड पर अपोपचयन आचरण-2' हिन्दी में लिखा जो 'विज्ञान परिषद्' की शोध पत्रिका 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' में सन् 1981 में प्रकाशित हुआ।

सन् 1982 में किसी कार्यवश इलाहाबाद गया। वहाँ विचार आया कि यदि आप किसी खास पत्र या पत्रिका में लिखना चाहते हैं तो पहले उसके स्टैण्डर्ड आदि से परिचित होना आवश्यक है और यह तभी हो सकता हैं जब उस पत्रिका को पढ़ा जाय। इसलिए 27 नवम्बर 1982 को मैं 'विज्ञान' का आजीवन सभ्य बन गया जिससे मुझे हर महीने पत्रिका प्राप्त होती रहे। आश्चर्य और सौभाग्य की बात है कि 'विज्ञान' मुझे उसी समय से आज तक नियमित रूप से हर महीने बिना बिलम्ब प्राप्त होती आ रही है। मैं यहाँ उल्लेख करना चाहता हूँ कि मैं कई अन्य लोकप्रिय और शोध पत्रिकाओं का नियमित सदस्य हूँ, लेकिन उनमें से कोई भी मुझे नियमित रूप से नहीं मिल पाती है। उसी समय डॉ० मिश्र से मुझे जानकारी मिली कि अगले कुछ महीनों में 'विज्ञान' का 'ऊर्जा विशेषांक' निकलने वाला है। उन्होंने कहा—इस विशेषांक के लिए लेख लिखिये। जब मैंने अपना भय और आशंका उनके सामने प्रकट की तो उन्होंने बड़े स्पष्ट और सशक्त शब्दोंमें सलाह दी 'आप लिखना प्रारम्भ करिए, व्यर्थ की चीजों के लिए परेशान मत होइए।'

यहाँ उज्जैन आकर मैंने उन्हें दो लेख भेजे। पहला 'सूर्य: एक अनन्त ऊर्जा स्रोत' डॉ० श्रीनिवासुलु के साथ तथा दूसरा, 'सौर ऊर्जा रूपान्तरण' अकेले। ये दोनों लेख 'विज्ञान' (जनवरी-मार्च 83) में प्रकाशित हुए। पहला लेख तो ज्यों का त्यों था, लेकिन दूसरे का इतना अधिक सम्पादन किया गया कि मैं उसे पढ़कर हतप्रभ रह गया। उसमें से वे सारे आँकड़े तथा संकेत हटा दिए गए जो मैंने तथ्यों को स्पष्ट करने के लिए बड़ी मेहनत से संजोए थे। इसके बाद से मेरी यह धारणा बन गई है कि लोकप्रिय लेखों में कथन का महत्व होता है, उसके प्रमाण का नहीं।

डॉ० मिश्र का यह कथन कि 'लिखना प्रारम्भ करो, दुनिया की चिन्ता मत करो' आज भी मेरे लेखक को सचेष्ट बनाए हुए है।

यह कहना वाकई असंगत न होगा कि जो भी 'विज्ञान परिषद्' परिवार के सदस्यों के समर्पण, लगन और त्याग को देख लेगा, प्रेरित हुए बिना नहीं रह सकेगा।

इस तरह बना मैं 'विज्ञान' लेखक

सतीश कुमार शर्मा
विश्ववानिकी वृक्ष उद्यान, झालाना डूंगरी, आगरा बाई पास, जयपुर—302004

बचपन से ही मेरी रुचि साहित्य में रही है। हालाँकि उच्च अध्ययन हेतु मैंने वनस्पति विज्ञान को चुना लेकिन कविता-कहानी लेखन हमेशा मेरा प्रिय शौक रहा। छात्र जीवन की समाप्ति 1979 में हो चुकने के बाद 1980 में मेरा प्रवेश वन-विभाग में हुआ। मेरा प्रथम पदस्थापन भरतपुर ज़िले के हलैना गाँव में हुआ। प्रसिद्ध 'घना पक्षी विहार' हलैना से लगभग 35 कि० मी० दूर है। मेरे एक सहपाठी उदयराम का पदस्थापन घना पक्षी विहार में स्थित एक पौधशाला में हुआ। सहपाठी से मिलने मैं अक्सर अवकाश के दिनों में घना जाया करता था। वहाँ, उदयराम मुझे पक्षी अवलोकन भी करा देता लेकिन केवल कौवा, गोरैया और मोर ही मेरी पहचान में आते। हर बार मैंने महसूस किया कि पक्षियों की बजाय नौकायन की तरफ ही मेरा आकर्षण ज़्यादा था।

जुलाई 1980 की बात है कि मैं भरतपुर हलैना राष्ट्रीय उच्च मार्ग न० 11 पर वेरी नामक स्थान पर एक संन्यासी से धार्मिक ज्ञानार्जन में लीन था कि सड़क के किनारे एक खेजड़ी के वृक्ष पर पक्षियों का मधुर संगीत ध्यान आकृष्ट करने लगा। वृक्ष के पास जाकर मैंने देखा तो पाया कि मेरे गाँव के खरीफ फसल से भरे खेतों में भी ऐसे पक्षी और घोंसले खूब मिलते हैं। मुझे पहचानते देर न लगी—यह बया पक्षियों की नीड़ कॉलोनी थी। वृक्ष के नीचे कुछ अधूरे घोंसले भी पड़े थे। मैंने एक घोंसले को उठा कर देखा तो उसमें मिट्टी के कुछ गोले लगे थे। यह घोसला अभी आधा ही बना था। बचपन में न जाने कितनी बार बया के घोंसले देखे होंगे परन्तु कभी इतना सूक्ष्म निरीक्षण नहीं किया था। प्रथम बार घोसले में मिट्टी देखकर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ।

मिट्टी घोंसले में किस लिये है? यह प्रश्न कई दिन मेरे ज़ेहन में रहा। इसका उत्तर मुझे घना में ही मिल सकता था। और पहली बार एक उद्देश्य लेकर मैं घना पक्षी विहार गया। घना में मुझे मिट्टी के बारे में कुछ ज़्यादा जानकारी तो नहीं मिली, हाँ मुझे यह बताया गया कि डॉ० सालिम अली नामक पक्षी वैज्ञानिक से इस बारे में जानकारी मिल सकती है।

घना से लौट कर भरतपुर तथा अलवर ज़िलों में अनेक स्थानों पर मैंने बयाओं का अवलोकन किया तथा कई नई जानकारियाँ हासिल कीं। मैंने पहला लेख बयाओं पर लिखा जो "बया के विचित्र घोंसले" नामक शीर्षक से 'विज्ञान प्रगति' में मई 1983 अंक में प्रकाशित हुआ। उस समय मैं विज्ञान की सिर्फ इसी हिन्दी पत्रिका को जानता था। मैंने दूसरा लेख भी बया पर लिखा जो 'विज्ञान प्रगति' के अगले ही अंक में छपा। बाद में मैंने बयाओं पर और लेख भी भेजे लेकिन 'विज्ञान प्रगति' ने एक ही विषय पर अनेक लेख छापने से मना कर दिया।

अब मेरे सामने समस्या यह थी कि लेख कहाँ प्रकाशित कराये जायें। एक दिन मैंने 'विज्ञान प्रगति' में देश की सबसे पुरानी पत्रिका 'विज्ञान' के बारे में पढ़ा। 'विज्ञान प्रगति' के माध्यम से 'विज्ञान' का परिचय और पता पाकर मैंने बया पर अगला लेख "भारतीय बया और उनका प्रजनन व्यवहार" 'विज्ञान' में प्रकाशनार्थ भेजा। 'विज्ञान' हेतु यह मेरा प्रथम लेख था जिसके 'संपादक के खेद साहित वापिस' आने की काफी सम्भावना थी।

मैंने 'विज्ञान' के अगले कई अंकों को दो-दो बार पलट कर देखा। मेरा लेख नहीं था। मैंने यह सोच लिया या तो लेख डाक में गुम हो गया या 'विज्ञान' के संपादक ने रद्दी की टोकरी में डाल दिया।

धीरे-धीरे मैं 'विज्ञान' और अपने लेख को भूलने लगा। लेकिन एक सुबह मेरे लिये बहुत आनन्ददायक रही। इस बार मुझे 'विज्ञान' का अगस्त 1984 का अंक मिला जिसमें मेरा लेख था।

'विज्ञान' के विविध अंकों में यह सूचना भी छपी रहती है कि नवलेखकों को प्रोत्साहन दिया जायेगा। मुझे इस सूचना से हमेशा साहस मिलता था कि विज्ञान में मुझे मौका मिल सकता है। और मेरा अनुमान सत्य निकला। 'विज्ञान' ने एक के बाद एक वन, वन्यप्राणी एवं पर्यावरण संबंधी मेरे अनेक लेख गत वर्षों में प्रकाशित किये। इससे मेरा उत्साह वर्धन हुआ और मेरा लेखन और गंभीर होने लगा।

इधर 'विज्ञान' ने मुझमें उत्साह के बीज बोये तो उधर मेरा सम्पर्क डॉ० सालिम अली जी से भी हो गया। लेकिन तब तक मैं जान चुका था कि डॉ० अली भारत की ही नहीं दुनिया की वह महान् विभूति हैं जिन्होंने बया पर महान् अनुसंधान कार्य किया है। डॉ० अली ने मुझे बया के घोंसले में पाई जाने वाली मिट्टी तथा बया से जुड़े अन्य पहलुओं पर अनुसंधान करने की प्रेरणा दी। शीघ्र ही बया पर मेरे द्वारा किये गये कार्य से संबंधित अनुसंधान पत्र डॉ० अली की व्यक्तिगत रुचि से प्रसिद्ध अंग्रेजी अनुसंधान पत्रिका "जर्नल ऑव बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी" में प्रकाशित हुये।

"जर्नल ऑव बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी" जैसे प्रतिष्ठित पत्र में पहुँचकर भी मुझे संतोष और खुशी नहीं हुई। मैं हमेशा यही सोचता कि मेरे जैसे अंग्रेजी का अधकचरा ज्ञान रखने वालों के लिये देश की अपनी भाषा हिन्दी में अनुसंधान पत्र प्रकाशित क्यों नहीं होते? और एक दिन मुझे सुकून मिला 'विज्ञान' से ही। मेरे लिये यह नई जानकारी थी कि 'विज्ञान परिषद् प्रयाग', 'विज्ञान' के अलावा हिन्दी में 'अनुसंधान पत्रिका' भी प्रकाशित करती है। शीघ्र ही मैंने 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' को प्राप्त कर लिया। और एक शुभ दिन वह भी आया जब इसी अनुसंधान पत्रिका में मेरा पहला अनुसंधान पत्र 1986 के अंक 29 (2) में प्रकाशित हुआ।

आज आठ साल पीछे मुड़कर देखता हूँ तो पाता हूँ उस समय मेरा कहीं कोई अस्तित्व नहीं था। लेकिन 'विज्ञान' ने मुझ जैसे अनजान और कच्चे लेखक को भी अपना कर एक दिशा प्रदान की। आज भी मैं 'विज्ञान' की बताई दिशा पर चल रहा हूँ।

मेरे संस्मरण

डॉ० एस० ए० परमहंस

बी i/148 —1–क, असी, वाराणसी—221005

आधुनिक बीजगणित के क्षेत्र में शोध कार्य करते समय जब मैं 1972-73 में काशी हिन्दू विश्वविद्यालयीय केन्द्रीय पुस्तकालय में अध्ययन हेतु जाया करता था उस समय "विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका" की कुछ तत्कालीन प्रतियों की ओर दृष्टि गयी। विस्मयपूर्ण प्रसन्नता हुई यह जानकर कि वैज्ञानिक शोध लेखों को हिन्दी माध्यम से भी प्रकाशित करने वाली कोई शोध पत्रिका निकलती है। उस समय देश की स्वतन्त्रता का मूर्तरूप कुछ भासित हुआ और प्रेरणा मिली कि यदि अन्य विचारों को हम अपनी भाषा में व्यक्त कर सकते हैं तो वैज्ञानिक शोध सम्बन्धी विचारों की अभिव्यक्ति के लिए किसी अन्य भाषा पर निर्भरता क्यों हो। हाँ, पारिभाषिक तकनीकी शब्द कुछ समय के लिए ग्रहण किये जा सकते हैं और बाद में भावों को आत्मसात् करके अपनी भाषा के तत्समानार्थक पारिभाषिक शब्द खोजे जा सकते हैं जैसा कि मध्यकाल के पूर्व अरब और लैटिनवालों ने भारतीय वैज्ञानिक तथ्यों के साथ किया था। पर इसके लिए आवश्यकता है कटिबद्ध होने की। प्रसन्नता की बात है कि विज्ञान परिषद् के पदाधिकारीगण तथा सम्बद्ध विद्वान् कटिबद्ध हैं इस ओर। इस जन को तो अनुसंधान पत्रिका के लिए मात्र एक शोध लेख लिखने का अवसर मिल पाया पर हार्दिक इच्छा रहती है कि इस दिशा में और भी कार्य किया जाना चाहिए।

आशा है कि विज्ञान परिषद् समय-समय पर शोधकर्त्ताओं एवं शिक्षाविदों को इस ओर प्रेरणा देती रहेगी तथा इस देश की जनभाषा भी रहस्यमय वैज्ञानिक तथ्यों तथा गूढ़ दार्शनिक विचारों की अभिव्यक्ति के लिए सक्षम पदावली से समृद्ध हो जायगी।

विज्ञान परिषद् ने मेरे लेखन को नई गति व दिशा दी

विजय जी

जवाहर कॉलेज जारी, इलाहाबाद—212106

संभवतः सबसे पहले 1980 के शुरू में 'विज्ञान' पत्रिका मुझे देखने को मिली। यमुना पार के ग्रामीण क्षेत्रों में उस समय सूखे का प्रकोप चल रहा था। इलाहाबाद

विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों का एक दल सूखे की स्थिति का अध्ययन करने क्षेत्र में गया हुआ था। उस टीम में गणित विभाग के रीडर डॉ० बनवारीलाल शर्मा, भौतिकी विभाग के डॉ० अशोक कुमार गुप्ता, डॉ० चन्द्रमोहन भण्डारी आदि लोग थे। इन्हीं लोगों द्वारा सबसे पहले मुझे 'विज्ञान' पत्रिका देखने को मिली। इन लोगों ने मुझे 'विज्ञान' का ग्राहक बनने और 'विज्ञान' में लेख भेजने को भी प्रोत्साहित किया।

उस समय तक मैंने लिखना प्रारम्भ कर दिया था। मेरे लेख 'नगर स्वराज्य' नामक पाक्षिक पत्र में छपते थे जिसका सम्पादन डॉ० बनवारीलाल शर्मा कर रहे थे। मैं जल्दी ही 'विज्ञान' का ग्राहक बन गया। उस समय 'विज्ञान' का वार्षिक शुल्क 6 रुपया था। मैंने एक लेख भी भेजा जो अक्टूबर 1980 के अंक में छप गया।

इस लेख के छपने के बाद मेरे कई लेख विज्ञान में छपते गये। लेकिन विज्ञान परिषद् में मेरा आना जाना 1982 के आसपास ही शुरू हुआ। यहाँ डॉ० शिवगोपाल मिश्र और श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव (विज्ञान के वर्तमान सम्पादक) ने मुझे बराबर लिखने के लिए प्रोत्सहित किया। समय-समय पर विज्ञान परिषद् में आयोजित सभाओं और गोष्ठियों में भी बुलाया जाने लगा और आज विज्ञान परिषद् से घर जैसा लगाव हो गया है।

विज्ञान परिषद् के सम्पर्क से मेरे लेखन में वैज्ञानिक विषयों का समावेश हुआ। विज्ञान सम्बन्धी मेरे लेख 'विज्ञान' में तो छप ही रहे थे इसके अलावा मेरे वैज्ञानिक विषयों पर लेख 'विज्ञान प्रगति', 'आविष्कार', 'योजना', दैनिक 'अमृत प्रभात', 'खादी ग्रामोद्योग' जैसी अनेक प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में छपे। 1985 में विज्ञान लेखन के लिये परिषद् ने मुझे 'डॉ० गोरखप्रसाद पुरस्कार' देकर प्रोत्साहित किया। पिछले दिनों पत्रकारिता संस्थान उत्तर प्रदेश की ओर से ग्रामोन्मुखी पत्रकारिता के लिए मुझे 'मदन मोहन मालवीय ग्रामोन्मुखी पत्रकारिता' पुरस्कार भी मिल चुका है। यह पुरस्कार मेरे 1987 में छपे फीचर और लेखों के आकलन के आधार पर दिया गया है। यही नहीं पिछले दिनों किशोरों के लिए मैंने एक पुस्तक लिखी 'जीवन की उत्पत्ति और विकास की कहानी'। यह पुस्तक दिल्ली के एक प्रकाशक के यहाँ स्वीकृत है जिसका श्रेय भी विज्ञान परिषद् को ही जाता है।

'विज्ञान', विज्ञान परिषद् और सम्पूर्ण परिषद् परिवार को अनेक शुभकामनाएँ।

परिचय अभी नया है

प्रमोद कुमार

द्वारा श्री प्रेमचन्द्र मित्तल

रामगढ़ (अलवर), 301026

आज से करीब तीन माह पूर्व मुझे प्रकाशन व सूचना निदेशालय की मासिक पत्रिका 'विज्ञान प्रगति' का जून माह का अंक मिला। जैसी कि मेरी आदत है मैं पहले पूरी पत्रिका

को उलट-पलट कर देखता हूँ कि उसमें किसी पत्रिका का विज्ञापन तो नहीं है ! यदि विज्ञापन न भी मिले और केवल सम्पादक का नाम ही मिल जाये तो विज्ञान में अत्यधिक रुचि के कारण मैं पत्र-व्यवहार किए बिना नहीं रह पाता। 'विज्ञान प्रगति' में मुझे 'विज्ञान प्रदर्शनी व संगोष्ठियाँ' वाले पृष्ठ पर सम्पादक का नाम और पत्रिका 'विज्ञान' का परिचय दोनों ही मिल गये। मेरा मन आपके यहाँ पत्र डालने पर विवश करने लगा। बस उसी वक्त मैंने पत्र डाल दिया। पत्र का उत्तर आया तब जाकर मेरी मनोकामना पूर्ण हुई और मैं पत्रिका मँगवाने के लिए पैसे जोड़ने लगा। बहुत दिनों के अन्तराल पर मैंने मनीआर्डर किया। बस यहीं से मैं विज्ञान परिषद्, प्रयाग और उसकी मासिक पत्रिका 'विज्ञान' से अगवत हुआ। इनके लिए मैं सूचना और प्रसारण निदेशालय का बहुत आभारी रहूँगा। मनीआर्डर प्राप्त होने से पहले ही मेरे पास 'विज्ञान' पत्रिका आ पहुँची। इसके लिये मैं 'विज्ञान' के सम्पादक श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव जी का बड़ा आभारी हूँ कि उन्होंने मनीआर्डर प्राप्त होने से पूर्व ही विज्ञान में मेरी रुचि जानकर 'विज्ञान' का यह अंक इतनी शीघ्रता से प्रेषित किया। इसके साथ ही उन्होंने मुझे विज्ञान में और अधिक रुचि बनाये रखने की सलाह भी दी और लेखक बनने को प्रोत्साहित किया। उन्हीं के प्रोत्साहन से प्रोत्साहित होकर मैंने दिसम्बर में होने वाली संगोष्ठी के लिए एक लेख व संस्मरण के रूप में यह सब लिख डाला है और मेरा विश्वास है कि मैं सम्पादक जी के आशीर्वाद् से विज्ञान के क्षेत्र में कुछ कर पाऊँगा।

विज्ञान परिषद् ने विज्ञान में मेरी रुचि जाग्रत की है

डॉ० ओमप्रकाश सिनहा

राजनीतिशास्त्र विभाग, सी० एम० पी० डिग्री कॉलेज, इलाहाबाद

"डॉक्टर साहेब, विज्ञान परिषद् की इस गोष्ठी में आप अवश्य शामिल हों", छः साल पहले विज्ञान परिषद् के तत्कालीन संयुक्त मन्त्री तथा बड़े भाई जैसे मेरे मित्र एवं हितैषी श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव ने मुझे निमंत्रण पत्र देते हुए कहा।

"मैं इस गोष्ठी में आकर क्या करूँगा ?" मैंने मुस्करा कर कहा— "मैं राजनीति का विद्यार्थी ! मुझे विज्ञान की बातें कहाँ पल्ले पड़ेंगी ?"

"अरे, आप आइये तो," प्रेमचन्द्र जी ने इसरार करते हुए कहा—"आपको अवश्य रुचि आयेगी।"

"ठीक है !" मैंने संकोच के साथ कहा—"आप इतना कह रहे हैं, तो जरूर हाजिर होऊँगा।"

और उस गोष्ठी में मैं शामिल हुआ, जिसका विषय था 'मानव का विकास'। विज्ञान परिषद् के पुस्तकालय में आयोजित उस गोष्ठी में अनेक लब्ध-प्रतिष्ठ विद्वानों के

विचार सुनने को मिले। और मंत्र-मुग्ध सा मैं शुरू से आखिर तक उस गोष्ठी में बैठा रहा।

बस, उसके बाद मैं नियमित रूप से विज्ञान परिषद् द्वारा आयोजित गोष्ठियों में सम्मिलित होने लगा। मुझे कभी प्रतीत ही नहीं होता कि मैं कला संकाय का विद्यार्थी हूँ। विज्ञान और वैज्ञानिक विषयों में मेरी रुचि बढ़ने लगी। जैसे एक नया आयाम ही मिल गया मुझे सोचने-विचारने को।

विज्ञान परिषद् की पत्रिका 'विज्ञान' को मैं नियमित रूप से पढ़ने लगा। इसके पहले विज्ञान से सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन और लेखन में थोड़ी-बहुत रुचि मुझे ज़रूर थी, लेकिन विज्ञान परिषद् ने तो जैसे शुद्ध वैज्ञानिक विषयों के प्रति मेरी सुषुप्त अभिरुचि को जागृत कर दिया।

कुछ दिनों बाद मैं विज्ञान परिषद् का आजीवन सदस्य बन गया। इसके द्वारा आयोजित अच्छे सिम्पोजियम में मुझे सक्रिय रूप से भाग लेने और अपने आलेख पढ़ने का अवसर भी प्राप्त हुआ। यही नहीं, मेरे कुछ विज्ञान से सम्बन्धित आलेख 'विज्ञान' के अलावा 'आविष्कार' और अन्य पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुए और विज्ञान परिषद् की प्रेरणा से ही मुझे एक नई दिशा प्राप्त हुई। आज मैं जब कभी भी सोचता हूँ, तो मुझे अहसास होता है कि विज्ञान परिषद् ने मेरे जीवन के फलक को अछूते रंगों से भर दिया है।

विज्ञान परिषद् और मैं : एक दशक का नेह बन्धन !

अरविन्द मिश्र

18, अधिकारी आवास गृह, झांसी–3

मैंने प्रयाग विश्वविद्यालय के प्राणीशास्त्र विभाग में 1976 के उत्तरार्ध में दाखिला लिया था। मैं ठहरा ग्रामीण परिवेश से निकला एक रुमानी खयालों वाला युवा। 1978 के मध्य किसी ने मुझे 'विज्ञान परिषद्' का रास्ता बताया। मैं कुछ आत्म विमुग्ध, रोमांचित-प्रकम्पित और कुछ-कुछ अप्रस्तुत सा विज्ञान परिषद् की देहरी पार कर उसके कार्यालय कक्ष में प्रवेश कर गया।

इस तरह विज्ञान परिषद् से मेरा पहला साक्षात्कार हुआ था, जिसकी स्मृति आज भी हरी भरी है। एक वह दिन था और आज का दिन कि मेरे अनुज धर्मबन्धु श्री अनिल कुमार शुक्ल जी ने मुझे संस्मरण लिखने के लिये बाध्य सा कर दिया।

मैंने 'विज्ञान' के लिए पहला लेख लिखकर सम्पादक महोदय के पास भिजवा दिया। मेरा लेख अक्टूबर 1978 के अंक में प्रकाशित हुआ—'मलेरिया : वापसी क्यों ?'

पर 'विज्ञान' में मेरे पहले लेख के प्रकाशित होने तक 'अमृत प्रभात' में मेरे चार-पाँच लेख निकल भी चुके थे।

अद्भुत् संयोग देखिये कि 'विज्ञान' में मेरे पहले लेख के प्रकाशन के ठीक एक दशक बाद मैं उसी पत्रिका के अमृत जयन्ती अंक में यह संस्मरण लिख रहा हूँ। सचमुच समय बीतते देर कहाँ लगती है? इस एक दशक में विज्ञान परिषद् से मेरा नेह प्रगाढ़ होता गया। और फिर तो ऐसा हुआ कि "मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै" की भाँति मैं इस दशक के लगभग हर महत्वपूर्ण क्षणों में 'विज्ञान परिषद्' से जुड़े रहने के गौरव से अभिभूत होता रहा हूँ। और परिषद् परिवार के सानिध्य में बहुत कुछ सीखने और अनुकरण करने को मिला है।

विज्ञान परिषद् के एक जाज्वल्यमान सदस्य हैं, डॉ० शिवगोपाल मिश्र, जिनकी आभा में विज्ञान परिषद् आज भी आलोकित है। मैंने "उपनिषदीय" परम्परा में डॉ० मिश्र जी से काफी कुछ सीखा-पाया है, या यों कहिये कि उन्हीं के चलते मैंने अपनी घुमक्कड़ी प्रवृत्ति रूपी नैया विज्ञान परिषद् से मजबूती से बाँधे रखी, जिसकी डोर समय के साथ लचीली तो कई बार हुई पर टूटी नहीं। यह डॉ० मिश्र ही रहे हैं जिनकी प्रेरणा से मैंने 'विज्ञान' के कुछ संग्रहणीय अंकों में सहयोग किया। परिषद् के मंच पर व्याख्यान दिया। "मानव एक नंगा कपि है" लेख पर मुझे 1982 में "**डॉ० गोरख प्रसाद पुरस्कार**" से सम्मानित किया गया। 1982 में ही **चार्ल्स डार्विन** की पुण्य शती पर 'विज्ञान' का एक विशेषांक प्रकाशित हुआ जिसमें सहयोग कर मुझे अतिशय गौरवानुभुति हुई थी। वह पूरा साल ही चार्ल्स डार्विन को समर्पित था। मैंने राहुल सांकृत्यायन, डार्विन और करपात्री जी के विशिष्ट "द्वैत" जैसे जटिल विषय पर भी अपनी अनधिकार लेखनी चला डाली थी। डॉ० मिश्र ने मुझे हमेशा कुछ बोलने को प्रोत्साहित किया और जो कुछ भी मैं अपनी लड़खड़ाती जुबान में बोल पाया उसे सराहकर उन्होंने सदैव मेरा मनोबल बढ़ाया। ऐसे उदारचेता, प्रेरणास्त्रोत 'विज्ञानी' के प्रति मैं आजीवन कृतज्ञ रहने को संकल्प-रत हूँ।

और भी कई नाम हैं, जो यादों के वातायन में तैर रहे हैं। विज्ञान परिषद् का एक भरापूरा परिवार है और यह प्रायः ज़रूरी नहीं कि परिवार के हर सदस्य को नाम से पुकारा जाय। हालांकि उनकी उपस्थिति अनुपस्थिति दोनों बहुत मायने रखती है।

विज्ञान परिषद् और परिषद् परिवार अजर-अमर रहे। अमृत महोत्सव पर मेरी यही शुभकामना है।

जिसका ऋणी हूँ उसी की भूली-बिसरी स्मृतियाँ

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

1952 में एम० एस-सी० का विद्यार्थी था तो मेरे गुरु डॉ० हीरालाल निगम ने डॉ० धर के एक लेख का हिन्दी अनुवाद करने को दिया। उन्हें ज्ञात था कि मैं हिन्दी में रुचि रखता हूँ। वह अनुवाद विज्ञान में छप गया। मैंने वह अंक भी नहीं देखा। न विज्ञान परिषद् के विषय में कुछ अधिक जान पाया क्योंकि तब परिषद् का अपना भवन न था। किन्तु 1956 में जब मैं विश्वविद्यालय में अध्यापक हो गया और रसायन विभाग में अध्यापन कार्य करने लगा तो परिषद् भवन से साक्षात्कार हुआ और 'विज्ञान' पत्रिका के सम्पादन-मण्डल में भी आ गया। डॉ० सत्यप्रकाश जी ने तभी न जाने कैसे मुझे ढूँढ़ निकाला और 1958 में 'विज्ञान परिषद् अनुसधान पत्रिका' का भार भी दे दिया। मुझे एक आलमारी मिल गई। जो शोध-निबन्ध आते, उनका अनुवाद, सम्पादन, फिर प्रेस प्रूफ संशोधन—सारा कार्य डॉ० साहब के निर्देशानुसार करने लगा। तभी मैंने 'विज्ञान' में एक लेख माला शुरू की 'भारतीय कृषि का विकास' जो बाद में पुस्तकाकार भी हो गई। 1960-61 में डॉ० रमेशचन्द्र कपूर विज्ञान परिषद् के प्रधानमन्त्री बने तो परिषद् भवन में कुछ अभिवृद्धि हुई। विदेशी जर्नलों के साथ 'अनुसंधान पत्रिका' के विनिमय का कार्य उन्होंने सुरुचि पूर्वक सम्पन्न किया। 4-5 वर्षों तक परिषद् में मैंने उनके साथ बड़ी ही तत्परता से काम किया। फिर 'अनुवाद-सेल' की स्वीकृति विज्ञान परिषद् को मिली तो डॉ० सत्यप्रकाश ने पॉलिंग की पुस्तक कालेज केमिस्ट्री का अनुवाद मेरे जिम्मे किया। उसे भी पूरा करके पुस्तक रूप देने तक का सारा कार्य मुझे ही करना पड़ा।

बहुत अच्छे दिन बीते विज्ञान परिषद् में। 'विज्ञान' का सम्पादक, फिर परिषद् का प्रधानमंत्री बना। विगत 35 वर्षों से परिषद् से जुड़ा रहने से यदि विज्ञान परिषद् न जाऊँ तो लगता है कुछ खोया रहता है। मैंने परिषद् के आफिस में एक ही स्थान पर बैठकर हज़ारों पृष्ठों का अनुवाद, सैकड़ों लेख आदि लिखे हैं। तमाम नये लेखकों से बातें की हैं, उन्हें लिखने के लिए प्रेरित किया है, कइयों का कोप-भाजन बना हूँ। किन्तु चाहे डॉ० गोरख प्रसाद रहे हों, या डॉ० सत्यप्रकाश अथवा परिषद् के तमाम सभापति या अन्तरंगी, मैं सबों का प्रीति भाजन रहा हूँ। मैं स्वयं नहीं समझ पाया कि वे सब मुझे इतना प्रेम क्यों देते हैं। डॉ० सत्यप्रकाश जी (अब स्वामी सत्यप्रकाश) ने तो बेहद प्रेम बरसाया है। मैं चिरऋणी हूँ उनका।

स्वामी जी के ही कारण मैं प्रो० फूलदेव सहाय वर्मा तथा डॉ० आत्माराम के भी सम्पर्क में आया। ये दोनों महापुरुष भुलाये नहीं भूलते।

फिर 'विज्ञान' से ही जुड़े मेरे मित्र हैं - श्यामसरन जी विक्रम, रमेशदत्त शर्मा, प्रेमानन्द चन्दोला, श्री डी० एन० भटनागर। विज्ञान पत्रिकाओं के सारे सम्पादक मुझे अपने ही लगते रहे। मैं उनसे मिलने की सुखद कामना से हर वर्कशाप में जाता रहा हूँ, उनके लिए लेख लिखता रहा हूँ और उनसे मिलकर वैज्ञानिक लेखक के स्तर को सुधारने की बातें करता रहा हूँ। मुझे सन्तोष है कि मैंने जो भी चाहा, हिन्दी लेखन के माध्यम से सब कुछ मिला—सम्मान, पुरस्कार, धन सभी कुछ। सबसे बड़ा धन तो विज्ञान लेखकों का बढ़ता परिवार है। मैं धरती को अपनी माता मानता हूँ। मृदा विज्ञान का अध्यापक हूँ। और विज्ञान परिषद् को प्रेरणा का स्रोत। उसके लिए मैं कुछ भी करने को तैयार हूँ।

किमधिकम्

मुझे प्रसन्नता है कि विज्ञान परिषद् का नेतृत्व अब नवीन पीढ़ी के हाथों में जा रहा हैं जिसका उत्तरदायित्व वे क्षमतापूर्वक संभाल रहे हैं।

विज्ञान परिषद् ने मुझे लिखने की प्रेरणा दी है

डॉ० अशोक कुमार गुप्ता

रसायन विभाग, एग्रीकल्चर इंस्टीट्यूट, नैनी, इलाहाबाद

विज्ञान परिषद् से मैं परिचित हुआ 1978 में जब शोध-छात्र के रूप में मैंने रसायन विभाग में प्रवेश लिया। मेरे शोध निर्देशक डॉ० शिवगोपाल मिश्र विज्ञान परिषद् में अधिक समय देते थे। वहीं जाकर फुरसत से मैं अपनी कठिनाइयाँ हल करता था। डॉ० प्रेमचन्द्र मिश्र वहाँ नियमित आते थे। उन्होने मुझे परिषद् के बारे में बताया। विज्ञान परिषद् के वाचनालय में बैठ कर मैं अपने शोधकार्य की योजनायें बनाता था। वहाँ का भवन, वाचनालय, आफिस देखकर बहुत ही प्रभावित हुआ। श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव जो नियमित वहाँ आया करते थे, उनसे भी परिचित हुआ। कुछ ही दिनों बाद उन्होंने मुझे एक लेख 'विज्ञान' के लिए लिखने को कहा। मुझे यह कार्य अत्यन्त दुष्कर लगा, क्योंकि मैंने हिन्दी केवल हाईस्कूल तक पढ़ रखी थी। और अन्य विषय भी इण्टर से अंग्रेजी भाषा के माध्यम से ही पढ़ा था। दो-तीन दिनों तक उधेड़बुन में फँसे रहने के बाद, किस विषय पर लिखूँ, यह समझ में ही नहीं आया। एक सप्ताह बाद उन्होंने मुझे फिर टोका कि लेख कब दे रहे हैं? अन्दर से मुझमें लिखने की इच्छा जागृत हो चुकी थी अतः मैंने झिझक छोड़कर पूछ ही लिया कि किस विषय पर लिखूँ। उन्होंने मुझे प्रोत्साहित करने के लिये अपने लेखक बनने की कहानी विस्तारपूर्वक बता दी और कहा कि अपने विषय पर

ही कुछ लिखिये। अगले दिन डॉ० मिश्र से मैंने 2-3 विषय बताते हुए पूछा कि क्या इन पर लिखूँ तो उन्होंने कहा कि लिखो, पर खूब पढ़कर लिखो। थोड़ा ही पर काफी इन्फार्मेटिव हो। बस क्या था, झिझक छोड़कर एक लेख लिख दिया। हिन्दी अच्छी थी नहीं, अतः श्रीवास्तव साहब ने कई संशोधन करने के बाद उसे पुनः लिखने को कहा। लेख 'विज्ञान' के 1982 के एक अंक में छप गया। अब तो मुझे अपार प्रसन्नता हुई। यह मेरा पहला लेख था अतः 'विज्ञान' को लेकर मैं कई साथियों को दिखाता रहा, हफ्तों लेकर घूमा। बस अन्दर से प्रेरणा हुई कि यह कार्य कठिन नहीं है और करना भी चाहिये। श्रीवास्तव जी तथा डॉ० मिश्र मुझे प्रेरित करते रहे। मैं लेख एक के बाद एक लिखता गया। मुझे प्रेरणा मिली विज्ञान परिषद् के इन निष्ठावान कार्यकर्ताओं से और इनके अटूट लगन से। मैं विज्ञान परिषद् की ओर खिंचता ही गया। मैंने पाया कि यह संस्था जिन महान उद्देश्यों के लिए आरम्भ हुई थी वह अपनी राह से न भटक कर उन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति कर रही है, मैं बहुत प्रभावित हुआ। मैंने देखा कि इस संस्था ने मेरे जैसे सैकड़ों लेखकों को प्रोत्साहित किया।

मैं अपने को बहुत ही भाग्यशाली समझता हूँ कि विज्ञान परिषद् से जुड़ कर मैं कुछ सीख पाया हूँ। मेरे लिये यह भी खुशी की बात है कि विज्ञान परिषद् अपनी 75वीं वर्षगाँठ मना रही है। मैं इस संस्था को नमन करते हुए इसके उज्जवल भविष्य की कामना करता हूँ।

सेवा और त्याग का व्यावहारिक पाठ मैंने परिषद् में सीखा है

अनिल कुमार शुक्ल

संयुक्तमंत्री, विज्ञान परिषद्, प्रयाग

आज से करीब छः साल पहले 1982 में जब मैंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया था, तब मैं विज्ञान का विद्यार्थी अवश्य था, लेकिन मैं वैज्ञानिक पत्रिकाओं या वैज्ञानिक साहित्य का नियमित पाठक नहीं था, पर 'विज्ञान प्रगति' पत्रिका के कुछ अंक कभी कभार खरीद कर पढ़ लिया करता था।

एक बार दयानन्द मार्ग से गुजरते हुए मैंने उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान का बोर्ड देखा। बोर्ड पर लिखा था—हिन्दी में विश्वविद्यालय स्तरीय पुस्तकें मिलने का स्थान। अगले दिन पहुँच गया तो पता चला कि हिन्दी संस्थान के (तत्कालीन) कार्यालय प्रभारी श्री मोहन पांडेय बलिया ज़िले के ही हैं। परिचय बढ़ा, स्नेह बंधन प्रगाढ़ हुआ और मैं प्रायः रोज ही हिन्दी संस्थान के कार्यालय आने लगा। बातें करता, किताबें देखता और खरीद कर ले जाता। साहित्य में मेरी गहरी रुचि देखकर पांडेय जी ने 'विज्ञान परिषद्' और उसकी पत्रिका 'विज्ञान' के बारे में बताया। तब 'विज्ञान' का मूल्य था पचास पैसे।

मैंने उस महीने की 'विज्ञान' खरीदी और अगले माह वार्षिक चंदा भी जमा किया। अब हर माह की 15 तारीख को परिषद् के कार्यालय में आकर पत्रिका ले जाता।

करीब दो साल बाद नवम्बर 84 की पत्रिका लेने जब मैं कार्यालय पहुँचा तो पता लगा कि पत्रिका अभी नहीं छपी। पूछने पर पता चला कि तीन महीने की पत्रिका एक साथ छपेगी—विज्ञान कथा विशेषांक के रूप में ! फिर अनायास ही परिषद् के कार्यालय प्रभारी श्री गंगाधर तिवारी जी ने पूछ दिया था कि आप 'विज्ञान' केवल पढ़ते ही हैं कि लिखते भी हैं ? उन्हीं दिनों 'Soviet Literature' पत्रिका का विज्ञान कथा विशेषांक निकला था और मेरे पास था। मैंने पूछा कि विज्ञान कथा का अनुवाद छपेगा ? पंडित जी ने कहा—क्यों नहीं, लिखके लाइए ! खुशी-खुशी घर लौटा और तीन-चार दिन बाद अनुवाद करके कार्यालय पहुँच गया। मैंने अनुवाद सीधे पंडित जी को दिया और उन्होंने 'सम्पादक जी को दीजिए' कहकर जिस व्यक्ति को दिया—उन्होंने बड़े प्यार से मुझे बैठाया और पूछा कि आपने कहाँ से अनुवाद किया, हमें दिखाइए। मेरा कमरा नज़दीक ही था, सो मैं लाने के लिए उठ खड़ा हुआ। वे रोकते ही रह गये, पर खुशी से फूला हुआ मैं कमरे से लाने चला ही गया। 'Soviet Literature' का वह अंक लाकर मैंने दिया और उस दिन घन्टे भर तक कार्यालय में बैठा रहा और बातें सुनता रहा। एक ही दिन में अंतरंगता इतनी बढ़ी कि बार-बार वहीं आने को जी चाहता। सोवियत विज्ञान कथा का वह अनुवाद छपा—मेरी पहली रचना छपी। अत्यंत खुशी हुई, संतोष मिला और लिखने की प्रेरणा भी जगी।

इस रचना के छपने के साथ ही मैं परिषद् के परिवार का अपना हो गया। मुझे यहाँ आने की ललक बनी रहती, जिस दिन न आता, उस दिन महसूस होता कि मैं बेकार पड़ा हूँ, कुछ करने को है ही नहीं ! धीरे-धीरे मेरी रचनाएँ छपती गईं और मैं परिषद् के कार्यालय में नियमित रूप से आने लगा। परिषद् से मुझे इतना प्यार और प्रोत्साहन मिला है कि परिषद् मेरा दूसरा घर हो गया है। यहाँ मैं अपने को लेखक या पदाधिकारी नहीं महसूस कर पाता—यहाँ का हर काम अपना ही काम लगता है। परन्तु यह कोई मेरी विशेषता नहीं—परिषद् से जुड़ा हर व्यक्ति यही महसूस करता है। यह परिषद् की विशेषता है, परिषद् की महत्ता है कि परिषद् से जुड़ा हर व्यक्ति त्याग और सेवा का प्रतीक बन जाता है। परिषद् से जुड़ने के पूर्व 'त्याग' और 'सेवा' जैसे शब्द मुझे भी एक ऐसा आदर्श लगते थे—जिनसे प्रेरणा ली जा सकती है, पर उन्हें हासिल नहीं किया जा सकता ! परन्तु परिषद् से जुड़कर मेरी धारणा बदल चुकी है। मुझे विश्वास हो चुका है कि आदर्श खोखले नहीं—उन्हें सच करने वाले इस दुनिया में अभी ढेर सारे लोग हैं—ऐसे ही लोगों का एक समूह है सारा 'विज्ञान परिषद् परिवार' ! विज्ञान परिषद् से जुड़ा हर व्यक्ति—चाहे वह लेखक हो, पाठक हो या फिर परिषद् का पदाधिकारी—हिन्दी सेवा और विज्ञान प्रेम की मिसाल है।

'विज्ञान परिषद्, प्रयाग' के परिसर में प्रवेश करने वाला हर व्यक्ति, 'व्यक्ति' नहीं 'संस्था' बन जाता हैं। एक अपूर्व प्रेरणा से प्रेरित हो उठता है उसका मन और वह सोचने

लगता हैं अपनी भाषा के उत्थान और प्रसार की बात, वैज्ञानिक मनोवृत्ति के उदय तथा अंधविश्वासी सोच के अंत का उपाय ! 'विज्ञान' के प्रचार और प्रसार के साथ-साथ 'विज्ञान लेखन' की समस्याओं के समाधान की दिशा में 'कुछ' करने की प्रेरणा का स्रोत है 'विज्ञान परिषद्' ! मैंने यहाँ से जुड़े वरिष्ठ विज्ञान सेवियों से बहुत कुछ सीखा है, पर मैं उनका नाम इस लिए नहीं ले रहा हूँ क्योंकि उन लोगों ने अपना जीवन ही मानों विज्ञान परिषद् की अमृतधारा में मिला रखा है। सोते जागते उन्हें विज्ञान परिषद् का ही खयाल रहता है। ऐसे व्यक्तियों को उनके नाम से याद करना उनके त्याग और सेवा भाव का अवमूल्यन करना है। इसीलिए मैं यह मानता हूँ कि जीवन में सेवा और त्याग का व्यावहारिक पाठ मैंने विज्ञान परिषद् से जुड़कर सीखा है और मेरी हार्दिक आकांक्षा है कि परिषद् की यह अमृत जयंती मुझे जीवन भर इस पाठ को न भूलने की शक्ति दे और मुझे सामर्थ्य दे कि मैं भी अपनी जीवनधारा परिषद् की अमृतधारा में मिला सकूँ।

स्मृति के झरोखे से

प्रो० भगवती प्रसाद श्रीवास्तव

46, पाण्डेय बाजार, आज़मगढ़, उत्तर प्रदेश–276001

विज्ञान परिषद् की पत्रिका 'विज्ञान' से परिचित होने का अवसर मुझे लगभग 60 वर्ष पूर्व मिला था, जब हाई स्कूल परीक्षा उत्तीर्ण करके 1928 में इण्टर कक्षा में पढ़ने के लिये इलाहाबाद के ईविंग क्रिश्चियन कॉलेज में मैंने प्रवेश लिया।

इण्टर कक्षा में मैंने विज्ञान का विषय लिया था। हिन्दी के प्रति मेरी विशेष रुचि थी, किन्तु उन दिनों विज्ञान के विद्यार्थियों को हिन्दी नहीं मिलती थी। अत: उस वक्त मुझे मानसिक संघर्ष से गुज़रना पड़ा कि विज्ञान लें या हिन्दी। अन्ततः निर्णय लिया कि विज्ञान की कक्षा में प्रवेश ले लें, और हिन्दी का अध्ययन स्वयं करते रहें।

कॉलेज अमेरिकन मिशन द्वारा संचालित होता था, अत: पुस्तकालय में पापुलर सायन्स, सायन्टिफिक अमेरिकन आदि अनेक वैज्ञानिक पत्रिकाओं के अनुशीलन का अवसर मिला। तभी मन में विचार हुआ कि काश हिन्दी में भी जन सुलभ शैली में विज्ञान संबंधी लेख वाली पत्रिकाएँ उपलब्ध होतीं। सौभाग्यवश कॉलेज के वाचनालय में "विज्ञान" की एक प्रति देखने को मिली – ऐसा लगा जैसे मुझे कोई अमूल्य निधि प्राप्त हो गयी हो।

कॉलेज के भौतिकी विभाग के तत्त्वावधान में प्राय: विज्ञान के रोचक पहलुओं पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय के विद्वानों द्वारा व्याख्यान आयोजित होते। इस क्रम में (स्व०) डॉ० गोरख प्रसाद ने "विश्व की विशालता", "काल गणना" आदि विषयों पर हिन्दी में भाषण दिये। इन्हें सुनकर मन में अभिलाषा जगी कि मैं भी हिन्दी माध्यम से वैज्ञानिक विषयों पर रोचक शैली में विवरण प्रस्तुत कर सकता तो कितना अच्छा होता !

दो वर्ष उपरान्त विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया तो सौभाग्यवश डॉ० गोरावप्रसाद एवं डॉ० सत्यप्रकाश दोनों ही विद्वानों से मेरा संपर्क बढ़ा और विज्ञान परिषद् के क्रिया कलापों में भाग लेने के अवसर अनायास ही प्राप्त होते रहे। उन्हीं दिनों भौतिकी विभाग के सभागार में विज्ञान परिषद् के तत्वावधान में "अखिल ब्रह्माण्ड" पर प्रो० राम दास गौड़ का सारगर्भित भाषण सुनने को मिला। ऐसे क्लिष्ट विषय पर प्रो० गौड़ के धारा प्रवाह हिन्दी भाषण को सुनकर मैं आश्चर्यचकित रह गया—फलतः हिम्मत जुटाकर विज्ञान विषय के कतिपय हिन्दी लेख मैंने तैयार किये। डॉ० गोरख प्रसाद ने उन्हें देखा तो वे बहुत प्रसन्न हुए तथा सहर्ष उन्होंने 'विज्ञान' में प्रकाशित करने के लिये उन लेखों को स्वीकार कर लिया। तदुपरान्त डॉ० गोरखप्रसाद और डॉ० सत्यप्रकाश एवं प्रो० सालिग-राम भार्गव द्वारा इस दिशा में आगे बढ़ने के लिये निरन्तर प्रोत्साहन मिलता रहा। कई वर्षों तक मैं 'विज्ञान' के लिये नियमित रूप से लेख लिखता रहा था।

एम० एस-सी० की डिग्री प्राप्त कर लेने के उपरान्त मैं मथुरा के किशोरी रमण कॉलेज में प्रवक्ता के पद पर नियुक्त हो गया—उन दिनों भी 'विज्ञान' से मेरा संपर्क बना रहा था। "विज्ञान" के रजत जयंती अंक में भी मेरा लेख छपा था—उसी अंक में मेरी जीवनी भी प्रकाशित हुई, इसके फलस्वरूप हिन्दी सेवा के लिये मुझे विशेष प्रोत्साहन मिला।

कालान्तर में, 1961 में "विज्ञान लोक" का जब मैं संपादक था तब भी 'विज्ञान' के संपादक मण्डल से मेरा घनिष्ट संपर्क कायम रहा था। इण्डियन सायन्स कांग्रेस के रुड़की अधिवेशन पर 'विज्ञान लोक' का मैंने विशेषांक निकाला था। उसके लिये मेरे विशेष अनुरोध पर डॉ० सत्यप्रकाश तथा डॉ० गोरखप्रसाद दोनों ही विद्वानों ने अपने लेख मुझे भेज दिये थे। कहने की आवश्यकता नहीं कि इन मनीषियों के लेख हमारी पत्रिका की गरिमा को बढ़ाने में विशेष रूप से सहायक सिद्ध हुए थे।

1977 जनवरी में दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने 'विज्ञान सम्मेलन' आयोजित करके हिन्दी विज्ञान साहित्य के प्रणयन के लिए भारत के जिन सात प्रमुख वैज्ञानिकों का अभिनन्दन किया था उनमें डॉ० सत्यप्रकाश के साथ-साथ मेरा भी नाम सम्मिलित था। इस अवसर पर डॉ० साहब ने विज्ञान लेखन की मेरी उपलब्धि पर मुझे हार्दिक बधाई देकर मेरा उत्साह वर्द्धन किया था।

पुनः 1983 में विज्ञान परिषद् ने विज्ञान लेखन के लिये अन्य 12 गण्यमान्य विद्वानों के साथ मुझे भी सम्मानित किया। इस अवसर पर तत्कालीन अध्यक्ष डॉ० गोविन्दराम तोशनीवाल ने अपने आशीर्वचन में मेरे लिए कहा था कि उन्हें गर्व है कि उनका ही एक विद्यार्थी मातृभाषा के विज्ञान पक्ष को समर्थ बनाने में मनोयोग पूर्वक कार्यरत है।

वस्तुतः यह स्वीकार करने में मुझे तनिक भी संकोच नहीं है कि हिन्दी के विज्ञान लेखन में आज जो स्थान मुझे प्राप्त है उसके लिये सर्वाधिक श्रेय 'विज्ञान' पत्रिका तथा

'विज्ञान परिषद्' के उन मनीषियों को देना चाहूँगा जो परिषद् के उन्नयन के लिये निःस्वार्थ भाव से जीवनपर्यन्त कार्यरत रहे हैं—(स्व०) डॉ० गोरख प्रसाद, (स्व०) प्रो० सालिगराम भार्गव, एवं स्वामी सत्यप्रकाश जी इनमें विशेष उल्लेखनीय हैं।

परिषद् से जुड़कर मुझे अतीव प्रसन्नता है

डॉ० ए० एल० श्रीवास्तव

प्राचीन इतिहास विभाग, सी० एम० पी० डिग्री कॉलेज, इलाहाबाद

आज से लगभग 19-20 वर्ष पहले जब मैं इलाहाबाद आया तब मुझे भारतीय सिक्कों के रासायनिक अध्ययन-सम्बन्धी एक पुस्तक देखने को मिली। इस पुस्तक के लेखक थे डॉ० सत्यप्रकाश। कुछ दिनों बाद मुझे यह जानकर थोड़ा आश्चर्य सा हुआ कि डॉ० सत्यप्रकाश ने अपने परिवार तथा पारिवारिक सम्पत्ति का परित्याग करके संन्यास ग्रहण कर लिया है। स्वाभाविक था कि मेरी जिज्ञासा ऐसे सन्त संन्यासी और विज्ञानवेत्ता के विषय में बढ़ती गई। और अनायास एक दिन मेरे सहयोगी एवं परम मित्र श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव ने मुझे ऐसा सुयोग सुलभ कराया कि मुझे स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती के न केवल दर्शन मिल सके अपितु मुझे उनका वेद-विद्या-सम्बन्धी व्याख्यान भी सुनने को मिला। स्थान था विज्ञान परिषद् का पुस्तकालय-कक्ष।

स्वामी जी से मिलने के उपरान्त मुझे यह जानकर और भी आश्चर्य हुआ कि स्वामी जी ने वैदिक वाङ्मय का गहन अध्ययन किया है और उन पर भाष्य तथा टीकाएँ लिखी हैं। उन्होंने धर्म और विज्ञान को एक-दूसरे का प्रतिद्वन्द्वी नहीं अपितु एक दूसरे का पूरक सिद्ध किया। स्वामी जी का एक अन्य प्रभावशाली कार्य हिन्दी में वैज्ञानिक अध्ययन-अध्यापन की दिशा में प्रयास रहा है। वे पिछले 50 वर्षों से विज्ञान परिषद् से, घनिष्ट रूप से जुड़े हुए हैं। और इस प्रकार मेरा परिचय हुआ विज्ञान परिषद् से उसके हितैषी संरक्षक स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती से, उसके प्रधान मंत्री डॉ० शिवगोपाल मिश्र से तथा इस परिषद् की हिन्दी मासिक पत्रिका 'विज्ञान' से। बाद में मुझे विज्ञान परिषद् में आयोजित कई व्याख्यानों-गोष्ठियों में उपस्थित होकर हिन्दी भाषा के माध्यम से विज्ञान तथा वैज्ञानिकों के विषय में जानकारी मिली। ऐसी ही एक गोष्ठी की मुझे याद आ रही है जो डार्विन की जन्मशती के अवसर पर आयोजित की गई थी। धीरे-धीरे विज्ञान परिषद् के कार्य-कलापों में तथा उनमें संलग्न निष्ठावान विद्वानों में मेरी रुचि एवं आस्था बढ़ती गई। और अंततः पर्यावरण-सम्बन्धी गोष्ठी में विज्ञान परिषद् ने मुझे भी अपना भागीदार बना लिया। उस गोष्ठी में पर्यावरण में वृक्षों के योगदान-सम्बन्धी प्राचीन भारतीयों का दृष्टि-कोण प्रस्तुत करने में मुझे भी बड़ी प्रसन्नता हुई और इतिहास एवं कला का विद्यार्थी होने पर भी लगा कि मैं भी सामाजिक विज्ञान का पाठ पढ़ और समझ सकता हूँ।

हिन्दी के माध्यम से विज्ञान की जानकारी देने के लिए विज्ञान परिषद् निःसंदेह एक श्लाघनीय कार्य करने वाली संस्था है। और इससे यत्किंचित जुड़कर मुझे भी अतीव प्रसन्नता है।

विज्ञान परिषद् : त्याग और सेवा की कर्मस्थली

आशुतोष मिश्र
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर

बात सन् 1983 की है। उन दिनों मैं "तरल क्रिस्टलों" (**Liquid Crystals**) से बड़ा प्रभावित था—बहुत लेख पढ़े, यहाँ तक कि साबुन के बुलबुलों पर प्रयोग (असफल प्रयोग !!) भी किए; और फिर एक लेख लिखा—"तरल क्रिस्टल"। बहुत दिनों तक मेरी किताबों के बीच पड़ा रहने के बाद वह लेख पिताजी के हाथ लगा जो उन्हें पसन्द आ गया। "विज्ञान" में छपने वाला मेरा यह पहला लेख था। फिर तो मानों मुझे लेख लिखने का चस्का ही चढ़ गया। लेख के साथ अपना नाम लगा देखकर बालमन को जो सुख प्राप्त होता था, वह अवर्णनीय है। वह विज्ञान परिषद् ही था जिसने मुझे अपने भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम प्रदान किया। इन पाँच वर्षों में मुझे विज्ञान परिषद् के और भी निकट आने का अवसर मिला—'विज्ञान' पत्रिका के माध्यम से, गोष्ठियों के माध्यम से।

विज्ञान परिषद् को देखकर मुझे लगा है कि हर प्रकार के अभावों, रुकावटों के होते हुए भी राह निकाल लेना कोई असम्भव कार्य नहीं है। परिषद् द्वारा आयोजित प्रत्येक गोष्ठी ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि लगन और कर्तव्यनिष्ठा द्वारा हम अल्पसमय में भी सराहनीय कार्य कर सकते हैं। जो व्यक्ति यह समझते हैं कि विज्ञान को जनमानस तक पहुँचाने के लिए वातानुकूलित कार्यालय और अपार धनराशि चाहिए, उन्हें एक नज़र विज्ञान परिषद् पर अवश्य डालनी चाहिए। वही पुरानी टाइपिंग मशीन, वही पुराने घरघराते पंखे, वही पुरानी कुर्सियाँ और अल्मारियाँ इस बात की द्योतक हैं कि विज्ञान परिषद् ने अपने ऊपर कुछ खर्च नहीं किया। परिषद् को देखकर मुझे ऋषियों, मुनियों के आश्रमों की याद आती है - सादगी के बीच मनीषियों के उच्च विचार—यही है विज्ञान परिषद् का स्वरूप जैसा मैंने पिछले आठ नौ वर्षों में देखा है। परिषद् की पवित्रता एवं शान्ति आज तक इसीलिए बनी रही क्योंकि वह आधुनिकता की अन्धी दौड़ से परे रहा है।

कल ही स्वामीजी मुझसे कहने लगे, "आशुतोष ! परिषद् का भार अब तुम लोगों के कन्धों पर आएगा—चौथी पीढ़ी के कन्धों पर। **Promise me, wherever you are, you will never forget your duty towards the Parishad.**"

परिषद् के अमृत महोत्सव के पावन अवसर पर मेरा स्वामी जी को दिया गया वचन है कि जीवनपर्यन्त विज्ञान परिषद् की गरिमा और पवित्रता को बनाए रखने में अपना योगदान देता रहूँगा।

विज्ञान परिषद् ने हिन्दी विज्ञान साहित्य को समृद्ध किया है

रामधनी द्विवेदी

उप-समाचार सम्पादक, 'अमृत प्रभात', इलाहाबाद

इलाहाबाद से 'अमृत-प्रभात' का प्रकाशन शुरू होने पर मैं दिसम्बर 1966 में यहाँ आया। इलाहाबाद का मेरा प्रवास मेरे विज्ञान लेखन के लिए अत्यन्त हितकारी हुआ, क्योंकि 'अमृत-प्रभात' ने विज्ञान विषयक विविध विषयों पर स्थायी स्तम्भ प्रकाशित करना शुरू किया और अपने लेखों के कारण मेरा कई विज्ञान लेखकों से परिचय हुआ। इस परिचय ने अनेकश: रूपों में मेरे अध्ययन और लेखन को प्रभावित किया। यहाँ जिन विज्ञान लेखकों के सम्पर्क में मैं आया उनमें डॉ० शिवगोपाल मिश्र, श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव, श्री अरविन्द मिश्र और श्री शुकदेव प्रसाद प्रमुख हैं।

मुझे वह संध्या अभी तक याद है, जब कटरा के आर्य समाज मन्दिर में शुकदेव प्रसाद जी की पत्रिका 'विज्ञान वैचारिकी' का विमोचन समारोह था। 'अमृत-प्रभात' के तत्कालीन सम्पादक श्री सत्य नारायण जायसवाल मुख्य अतिथि थे। उन्होंने पत्रिका विमोचन करते हुए 'विज्ञान परिषद्' से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'विज्ञान' की चर्चा की (हालाँकि उन्हें याद नहीं था कि 'विज्ञान' उस समय प्रकाशित भी हो रही है कि नहीं) और कहा कि हिन्दी में विज्ञान लेखकों को अभी अधिक श्रम करना है। उसी समारोह के डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी अध्यक्ष थे। उन्होंने बताया कि 'विज्ञान' अब भी प्रकाशित हो रही है, लेकिन व्यावसायिक स्वरूप न होने के कारण उसकी अधिक प्रसार संख्या नहीं है। इसी से सम्भवत: जायसवाल जी को भ्रम हो गया कि पत्रिका का प्रकाशन बन्द हो गया है। उस समारोह में शहर के अनेक विज्ञान प्रेमी और लेखक उपस्थित थे। 'विज्ञान-परिषद्', 'विज्ञान' और डॉ० शिवगोपाल मिश्र से यही मेरा प्रथम परिचय था।

तब से अब तक मैं 'विज्ञान परिषद्' से निरन्तर जुड़ा रहा हूँ और उसके विकास का प्रत्यक्षदर्शी भी। इन लगभग दस सालों में एक चीज जो मैंने पायी, वह है डॉ० शिव गोपाल मिश्र, श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव और उनके सहयोगियों का 'विज्ञान' और 'विज्ञान परिषद्' के प्रति गहन लगाव। यह सिर्फ इसलिए नहीं कि ये लोग 'विज्ञान परिषद्' के वरिष्ठ पदाधिकारी रहे, बल्कि इसलिए कि उनके मन में हिन्दी में विज्ञान लेखन के प्रति समर्पण की भावना थी। विज्ञान परिषद् की हर साँझ विज्ञान-लेखन की समस्याओं पर हुई चर्चाओं की गवाह है, जब भी दो-चार विज्ञान लेखक मित्र जुटे हिन्दी के विज्ञान साहित्य को समृद्ध करने के लिए चर्चाएँ हुई जिनके फलस्वरूप विज्ञान परिषद् के सभाकक्ष में अनेक

व्याख्यान मालाओं और गोष्ठियों का आयोजन हुआ। 'विज्ञान परिषद्' और डॉ० मिश्र ने विज्ञान-लेखन जैसे नीरस और अनुर्वर क्षेत्र में अनेक प्रतिभाएँ दीं और जो लोग पहले से इस क्षेत्र में थे, उन्हें तराशा-संवारा। आज 'विज्ञान परिषद्' अपना 'अमृत महोत्सव' मना रही है। मैंने देखा है कि अखिल भारतीय स्तर की संगोष्ठियाँ आयोजित करने में डॉ० मिश्र के समक्ष आर्थिक संकट के साथ-साथ कार्यकर्ताओं का भी किस तरह संकट रहा है। लेकिन उन्होंने हर संकट को पार किया और अनेक आयोजन किये। इस बीच घरेलू समस्याएँ भी आयीं, लेकिन वे व्यवधान न बन सकीं। जब 'अमृत-प्रभात' में एक पृष्ठ का विज्ञान परिशिष्ट प्रकाशित हुआ, तो विज्ञान-परिषद् के लेखकों ने उसमें यथाशक्य अपना सहयोग दिया। विज्ञान परिषद् ने समय-समय पर जो आयोजन किये हैं, उसने विज्ञान लेखकों को एक मंच पर आने और आपस में सम्पर्क बढ़ाने का भी अवसर दिया।

'विज्ञान परिषद्' जिनका मनःपूत है, वे हैं आदरणीय स्वामी सत्यप्रकाश जी। यदि कोई भी नया व्यक्ति विज्ञान-परिषद् में प्रवेश करे तो उसे स्वामीजी की सात्विक उपस्थिति का निरन्तर आभास होगा। स्वामीजी की उपस्थिति मात्र ने ही विज्ञान परिषद् की अनेक समस्याओं का समाधान किया है। उनका मार्ग-निर्देशन इसके विकास का आधार रहा है। परिषद् का वर्तमान सभा-कक्ष स्वामी जी की ही देन है। समय-समय उनके आशीर्वाद ने परिषद् के लिए संजीवनी का काम किया है।

विज्ञान परिषद् ने विज्ञान लेखकों के नैतिक प्रोत्साहन के लिए अनेक कार्य किये हैं, जिनमें हिन्दी के विज्ञान लेखकों को सम्मानित करना भी है। 1985 में जिन विज्ञान लेखकों का सम्मान किया गया, मैं भी उनमें एक था। इसी प्रकार 'विज्ञान' में प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ लेखों पर डॉ० गोरख प्रसाद सम्मान भी दिया जाता है। ये सम्मान लेखकों को निरन्तर अपनी साधना में लगे रहने का बल प्रदान करते हैं।

आज के व्यवसायिक युग में 'विज्ञान' जैसी पत्रिका का प्रकाशन कितना कष्ट साध्य है, उसे इसमें लगे लोग ही जान पाते हैं। मेरी हार्दिक इच्छा है कि इसका स्वरूप और निखरे और इसकी प्रसार संख्या बढ़े ताकि लोगों को यह अपनी गर्वपूर्ण उपस्थिति का आभास करा सके।

मेरी अनेक शुभ कामनाऐं!

परिषद् ने मेरे अंदर वैज्ञानिक चेतना का स्फुरण किया है

कु० अर्पिता प्रेमचन्द्र

5 ई/4 लिडिल रोड, जार्ज टाउन, इलाहाबाद—211002

'विज्ञान' पत्रिका के माध्यम से 'विज्ञान परिषद् प्रयाग' से मैं भली भाँति परिचित हूँ। 'विज्ञान' पत्रिका ने मेरे लेख प्रकाशित करके मुझे प्रोत्साहित तो किया ही है, परिषद् से इस सम्पर्क ने मेरे अन्दर वैज्ञानिक चेतना का स्फुरण भी किया है। परिषद् के माध्यम से ही मुझे स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी से लेकर परिषद् से जुड़े अनेक अन्य विशिष्ट व्यक्तियों के दर्शन और उनसे बात-चीत करने का भी सौभाग्य मिला है। मुझे स्वामी जी के अनेक विद्वतापूर्ण और रोचक व्याख्यान भी परिषद् में ही सुनने को मिले हैं। इसके लिए मैं विज्ञान परिषद् की कृतज्ञ हूँ।

अमृत जयंती वर्ष पर मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि परिषद्, राष्ट्रभाषा हिन्दी के माध्यम से, विज्ञान के प्रचार-प्रसार के अपने पुनीत कार्य में सदैव प्रगति पथ पर आगे बढ़ती रहे। परिषद् चिरायु हो।

विज्ञान परिषद् से मेरा जुड़ाव कब और कैसे

दिनेश द्विवेदी 'मणि'

शोधछात्र, शीलाधर मृदा-विज्ञान संस्थान, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद 211002

मैं उस समय एम० एस-सी० पूर्वार्द्ध का छात्र था जब हमारे संस्थान के निदेशक डॉ० शिवगोपाल मिश्र ने हम लोगों से 13 सितम्बर 1986 को विज्ञान परिषद् में आयोजित होने वाली एकदिवसीय अखिल भारतीय संगोष्ठी "पर्यावरण 2001" के विषय में बताया। मैं इस संगोष्ठी में अपने अग्रजों एवं सहपाठियों के साथ सम्मिलित हुआ। मूर्धन्य विद्वानों और विज्ञान लेखकों के विचारों से सहमत होने पर मेरे अन्दर भी विज्ञान लेखन के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न हुई। इसके पहले मैं सामाजिक और राष्ट्रीय भावना प्रधान लेख लिखा करता था। मूलतः मेरे साहित्यिक जीवन की शुरूआत कविता से हुई। बी०

एस-सा० प्रथम वर्ष से मैंने कविता लिखनी शुरू कर दी थी एवं इसके साथ-साथ मैं वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में भी भाग लिया करता था।

एम० एस-सी० उत्तरार्द्ध में आने पर 14 दिसम्बर 1987 को विज्ञान परिषद्, प्रयाग में आयोजित अखिल भारतीय संगोष्ठी "विज्ञान, तकनीकी और पर्यावरण-2001" में मैंने 'मोटर वाहनों की बढ़ती संख्या और पर्यावरण' विषय पर अपना लेख पढ़ा। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के इलाहाबाद में सम्पन्न हुए 44वें वार्षिक अधिवेशन के अन्तिम दिन, 3 मई 1988 को सम्मेलन की ही एक शाखा, विज्ञान परिषद् के तत्वावधान में "विज्ञान की उच्च शिक्षा का माध्यम अविलम्ब हिन्दी/प्रादेशिक भाषाएँ हो जानी चाहिये" विषय पर विचार-विमर्श करने के लिये एक संगोष्ठी का आयोजन हुआ। इस संगोष्ठी की अध्यक्षता हमारे संस्थान के निदेशक डॉ० शिवगोपाल मिश्र ने की थी। इस गोष्ठी मे उपर्युक्त विषय पर मैंने भी अपने विचार प्रस्तुत किये।

'विश्व पर्यावरण दिवस' पर 5 जून 1988 एवं 'वन्य जीव संरक्षण दिवस' पर 7 अक्टूबर 1988 को विज्ञान परिषद् में होने वाली गोष्ठियों में भी मैं शामिल हुआ तथा अपने निबन्ध प्रस्तुत किए और सुझाव रखे। इन सभी गोष्ठियों की रिपोर्ट 'विज्ञान प्रगति' और 'आविष्कार' जैसी पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हुई है। 'विज्ञान' पत्रिका में मेरे अनेक लेख प्रकाशित कर वर्तमान संपादक ने मेरा उत्साह बढ़ाया है। स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती से मैं सर्वाधिक प्रभावित रहा हूँ।

इस वर्ष विज्ञान परिषद् अपनी स्थापना के 75 वर्ष पूरे कर रहा है और इसकी अमृत जयन्ती मनाई जा रही है। मैं ऐसे विज्ञान परिषद् को नमन करता हूँ जिसने मुझे प्रेम, सेवा और त्याग का पाठ पढ़ाया है।

परिषद् की तो मैं चिर ऋणी हूँ

मंजुलिका लक्ष्मी

5-ई/4, लिडिल रोड, जार्ज टाउन, इलाहाबाद

विज्ञान परिषद्, प्रयाग की चर्चा मैंने सर्वप्रथम विज्ञान के तत्कालीन उभरते लेखक श्री शुकदेव प्रसाद से सुनी थी। उनका घर पर आना जाना था और वार्तालाप के मध्य वे अक्सर 'विज्ञान परिषद्' की गतिविधियों, उसकी पत्रिका 'विज्ञान' और उसके समय-समय पर निकलने वाले विशेषांकों के विषय में विस्तार से बताया करते थे। मूलतः साहित्य में रुचि होते हुए भी विज्ञान के प्राध्यापक पति के तथा अपनी स्वाभाविक जिज्ञासा के कारण वैज्ञानिक विषयों में भी मेरी रुचि जाग्रत हो चुकी थी। अतः वैज्ञानिक लेखन से सम्बन्धित उन घरेलू चर्चाओं में मैं पूरे मन से भाग लेती थी।

फिर, शनैः शनैः पतिदेव (श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव) का विज्ञान परिषद् से एक अनाम अटूट संबंध स्थापित हो गया और मैं अनायास विज्ञान परिषद् से जुड़ती गई।

किन्तु यही पर्याप्त कारण न था। इसके अन्य नितान्त व्यक्तिगत कारण भी थे। मेरी यह मान्यता थी, और है, कि आज के युग में विज्ञान जीवन की मुख्यधारा है और उसकी नित नवीन उपलब्धियों, प्रयोगशालाओं में आकार ले रही युगान्तरकारी खोजों और संपूर्ण जीवन शैली को बदलने वाले तज्जनित परिणामों से कटे रह कर जीवन जीना अर्थहीन भी है और दुर्भाग्यपूर्ण भी। वैज्ञानिक मनोवृत्ति विकसित करने और विज्ञान के अच्छे बुरे अवश्यंभावी परिणामों के प्रति जागरूक रहने के लिए वैज्ञानिक रुचि वाली पत्रिकाओं और चर्चाओं से जुड़ना आवश्यक था। यहीं मेरी सहायता विज्ञान परिषद् ने की। लगभग दस बारह वर्ष पूर्व परिषद् से हुए उस सामान्य परिचय के धीरे-धीरे प्रगाढ़ होने का यही सर्वप्रमुख कारण था।

एक अन्य प्रमुख कारण यह भी था कि विज्ञान परिषद् से जुड़े लोगों की निःस्वार्थ सेवाप्रवृत्ति ने भी मुझे बारंबार परिषद् के विषय में विचार करने पर विवश किया। जिस काल में अधिकांश जीवन-मूल्यों का आधार केवल 'अर्थ' बन गया हो, अपने श्रम और समय के बदले मात्र मनःतुष्टि पर संतोष कर लेने वाले परिषद् के अधिकारी स्तुत्य तो हैं ही, यह आस्था भी जगाते हैं कि शाश्वत मूल्यों का संघर्ष किसी न किसी रूप में सदैव जीवित रहता है। पचहत्तर वर्षों की लम्बी और कठिन यात्रा में समय-समय पर परिषद् से जुड़े विद्वानों की अहैतुकी कृपा ने ही इस दीपशिखा को प्रज्वलित रखा है। स्वयं मुझे परिषद् से जुड़े हुए डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी की कर्मठता ने अत्यन्त प्रभावित किया।

कुछ वर्षों पूर्व जब हम पति-पत्नी ने 'विज्ञान-वीथिका' नामक विज्ञान की एक नई पत्रिका निकालने का प्रयास किया था तब भी विज्ञान परिषद् परिवार के सदस्यों ने ही अपने सहयोग से उसमें प्राण फूंके थे। यह कहना आवश्यक न होगा कि इस प्रयास के पीछे भी प्रेरक स्रोत विज्ञान परिषद् से वर्षों का अविच्छिन्न संबंध ही था। (यह एक दूसरी कथा है कि बाज़ार की प्रतिद्वन्द्विता में प्रकाशक की असमर्थता के कारण पत्रिका मात्र 3 अंकों के प्रकाशन के बाद शीघ्र ही पंचतत्त्व में विलीन हो गई।)

विज्ञान परिषद् की इस प्रेरक सोद्देश्यता का ही परिणाम था कि पिछले एक दशक में मैंने भी विज्ञान विषयक लेख लिखे, जो परिषद् की पत्रिका 'विज्ञान' में तथा अन्यत्र भी प्रकाशित हुए। आज अपने विषय की अपेक्षा विज्ञान विषयक मेरे लेखों की संख्या अधिक है। साथ ही साथ समय-समय पर आयोजित होने वाली गोष्ठियों में भाग लेकर भी बहुत कुछ नया जाना और सीखा।

आज विज्ञान परिषद् परिवार से एक चिरकालीन आत्मीयता की अनुभूति होती है। अपने जीवन पर परिषद् के प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष प्रभावों और प्रेरणाओं की मैं चिर ऋणी हूँ। परिषद् अगणित अमृत जयंतियों तक जीवित और ज्योतित रहे इस शुभेच्छा के साथ······

परिषद् ने मुझे जीवन जीने की कला सिखाई है

प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

1963 में मैं सी० एम० पी० डिग्री कॉलेज के वनस्पति विभाग में प्रवक्ता नियुक्त हुआ पर परिषद् पहली बार तब गया जब शिक्षा मंत्री, प्रो० नूरुल हसन मुख्य अतिथि के रूप में परिषद् में आये थे। यह बात उस समय की है जब परिषद् का विशाल प्रेक्षागृह बना भी नहीं था। उसी अवसर पर मुझे पहली बार स्वामी सत्यप्रकाश जी को भी सुनने का सौभाग्य मिला। यह बात दूसरी है कि इसके वर्षों पूर्व स्वामी जी का प्रथम दर्शन मुझे गोरखपुर में हुआ था, अपने घर पर ही, जब स्वामी जी डॉ० सतीशचन्द्र त्रिपाठी (अब स्वर्गीय) के साथ मेरे (स्वर्गीय) पिताजी के पास आये थे। तब तक उन्होंने संन्यास नहीं लिया था।

विज्ञान परिषद् से मेरा परिचय कराने के सूत्र बने आज के लब्धप्रतिष्ठ युवा विज्ञान लेखक और सम्पादक श्री शुकदेव प्रसाद। तब वे विश्वविद्यालय के विद्यार्थी थे और मेरे पास प्रायः मिलने आया करते थे। उन्होंने मुझे डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से मिलवाया। मिश्र जी ने मुझे बड़े स्नेह से बैठाया और कहा, "मैंने शुकदेव जी से सुना है कि आपने अंग्रेज़ी में किताबें भी लिखी हैं और अधिकतर लेख भी अंग्रेज़ी में ही लिखते हैं। पर मैंने यह भी सुना है कि कभी आप हिन्दी में भी विज्ञान के लेख 'विज्ञान जगत्' और 'विज्ञान लोक' जैसी पत्रिकाओं के लिए लिखते रहे हैं। आपने हिन्दी में लिखना क्यों छोड़ दिया ?" इस प्रश्न का मेरे पास कोई समुचित उत्तर नहीं था। उन्होंने मुझे 'विज्ञान' में लिखने के लिए प्रेरित किया, प्रोत्साहित किया।

बस मेरी कुछ अवधि के लिए सोई हुई रुचि पुनः जाग उठी और मैं 'विज्ञान' के लिए लिखने लगा। मेरे लेखों को प्रकाशित करके तत्कालीन सम्पादक डॉ० शिवप्रकाश जी ने भी मेरा उत्साहवर्धन किया। बाद में मैं आठ वर्ष 'विज्ञान परिषद्' का संयुक्तमंत्री रहा और अब 'विज्ञान' का सम्पादक हूँ। इस बीच विज्ञान परिषद् और 'विज्ञान' पत्रिका मेरे दैनिक जीवन का अभिन्न अंग बन गये। मैं इस दौरान परिषद् से निरंतर जुड़ा रहा इसका एक मात्र कारण यही है कि मैं जिन लोगों के भी सम्पर्क में आया उनसे मुझे अपार स्नेह मिला। वे चाहे स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी हों, आदरणीय डॉ० शिव गोपाल मिश्र जी हों अथवा मेरे अनुज जैसे डॉ० अशोक कुमार गुप्ता या श्री अनिल कुमार शुक्ल। इन सभी लोगों से आत्मीयता प्राप्त करने के साथ-साथ मैंने बहुत कुछ सीखा भी।

इसके अतिरिक्त बहुत से ऐसे लोग हैं जिनके नामोल्लेख मैं नहीं कर रहा हूँ, किन्तु उनका आभार कुछ कम नहीं। विज्ञान परिषद् के माध्यम से मैं अन्य पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादकों और लेखकों के सम्पर्क में भी आया।

'विज्ञान' का सम्पादक होने के बाद तो मैं 'विज्ञान' के उन अनेक लेखकों और पाठकों से भी जुड़ा हूँ, जिन्हें न तो मैंने देखा है और न ही उन्होंने मुझे, फिर भी अटूट स्नेह बंधन में बँधे हैं।

इस अवधि में मेरे व्यक्तिगत जीवन में बहुत सी कठिनाइयाँ आई हैं जिन्हें मैंने परिषद् के काम में डूबे रहकर झेल लिया। विज्ञान परिषद् ने मुझे जीवन का ठोस आधार दिया है, जीवन जीने की कला सिखाई है।

आज जब मैं बीते वर्षों की ओर मुड़कर देखता हूँ तो ऐसा लगता है यदि मैं परिषद् से न जुड़ा होता तो मेरे जीवन का कितना अमूल्य समय व्यर्थ दैनन्दिन प्रपंच में चला गया होता। अब तो ऐसा हो गया है कि यदि मैं शाम को घर जल्दी पहुँच जाऊँ तो पत्नी और बच्चे तुरन्त प्रश्न करते हैं, "आज विज्ञान परिषद् बंद है क्या?" विज्ञान परिषद् से इस 'सफल' परिचय के लिए मैं अपने आपको श्री शुकदेव प्रसाद और डॉ० शिव गोपाल मिश्र का चिरऋणी मानता हूँ।

विज्ञान परिषद्, प्रयाग के इस ऐतिहासिक 'अमृत जयंती वर्ष' का मैं प्रत्यक्षदर्शी हूँ, इसे मैं अपना सौभाग्य और प्रभु की अनुकम्पा मानता हूँ।

परिषद् को कोटिशः प्रणाम!

विज्ञान परिषद् द्वारा दीर्घकालीन विशिष्ट

लेखन / सम्पादन के लिए सम्मानित व्यक्ति

1. डॉ० रामचरण मेहरोत्रा 2. डॉ० हीरालाल निगम
3. डॉ० संत प्रसाद टण्डन 4. डॉ० नन्दलाल सिंह
5. श्री रमेश दत्त शर्मा 6. श्री जगपति चतुर्वेदी
7. प्रो० भगवती प्रसाद श्रीवास्तव 8. श्री श्याम सरन विक्रम
9. डॉ० आत्माराम (स्वर्गीय) 10. डॉ० रामेश वेदी
11. डॉ० ब्रजमोहन 12. श्री ओंकारनाथ शर्मा
13. श्री विश्वम्भर प्रसाद 'गुप्तबन्धु' 14. श्री गुणाकर मुले
15. श्री प्रेमानन्द चन्दोला 16. डॉ० श्यामलाल काकानी
17. श्री देवेन्द्र मेवाड़ी 18. डॉ० ओम प्रभात अग्रवाल
19. श्री डी० एन० भटनागर 20. डॉ० भानुशंकर मेहता
21. डॉ० रमेश चन्द्र कपूर 22. श्री श्याम सुन्दर शर्मा
23. श्री विष्णुदत्त शर्मा 24. श्री रामधनी द्विवेदी।

विज्ञान परिषद्, प्रयाग

वर्तमान कार्यकारिणी

1. प्रो० यशपाल	सभापति
2. स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती	पदेन उपसभापति
3. डॉ० रामधर मिश्र	,,
4. श्री राम सहाय	,,
5. प्रो० कृष्ण जी	,,
6. डॉ० रामचरण मेहरोत्रा	,,
7. डॉ० गोविन्द राम तोशनीवाल	,,
8. डॉ० रामदास तिवारी	,,
9. डॉ० श्रीकृष्ण जोशी	उपसभापति
10. डॉ० चन्द्रिका प्रसाद	,,
11. डॉ० पूर्णचन्द्र गुप्त	प्रधान मंत्री
12. डॉ० रामसुरंजन धर दुबे	मंत्री (भवन)
13. डॉ० अशोक कुमार गुप्ता	संयुक्त मंत्री
14. श्री अनिल कुमार शुक्ल	,,
15. डॉ० जगदीश सिंह चौहान	कोषाध्यक्ष
16. श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव	संपादक, विज्ञान
17. डॉ० अशोक महान	पुस्तकालयाध्यक्ष
18. श्री श्रीकृष्ण श्रीवास्तव	आय व्यय-निरीक्षक
19. प्रो० हनुमान प्रसाद तिवारी	स्थानीय अंतरङ्गी
20. श्री लोकमणिलाल जी	,,
21. डॉ० शिवगोपाल मिश्र	,,
22. श्री बी० एन० सिन्हा	,,
23. डॉ० रमेशचन्द्र तिवारी, वाराणसी	बाह्य अंतरङ्गी
24. श्री डी० एन० भटनागर, दिल्ली	,,
25. डॉ० ओम प्रभात अग्रवाल, रोहतक	,,
26. डॉ० रामकृष्ण पाराशर, फैजाबाद	,,
27. श्री गजानन आर्य, कलकत्ता	,,
28. डॉ० राजकुमार बंसल, जयपुर	,,
29. डॉ० आर० सी० गुप्ता, राँची	,,
30. डॉ० बी० के० गौड़, हैदराबाद	,,
31. श्री नारायण दत्त, बम्बई	,,
32. श्री श्याम सरन विक्रम, ग्वालियर	,,

प्रयाग के प्रमुख स्थान

डॉ० ए० एल० श्रीवास्तव

गंगा और यमुना के पवित्र संगम पर प्रयाग बसा है। प्राचीनकाल में इस पवित्र स्थान पर यज्ञादि धार्मिक अनुष्ठान संपन्न किए जाते थे, इसीलिए इस स्थान का नाम 'प्रयाग' पड़ा। आगे चलकर मुगल सम्राट अकबर ने सन् 1583 ई० में दोनों नदियों के बीच क़िले की नींव रक्खी। कहते हैं कि क़िले तथा महलों का निर्माण करते समय अकबर ने इस स्थान का नाम 'इलाहाबास' रक्खा जो आगे चलकर 'इलाहाबाद' और अंग्रेज़ी शासनकाल में 'अलाहाबाद' (Allahabad) हो गया।

धार्मिक, शैक्षणिक तथा राजनैतिक गतिविधियों के कारण यह नगर अत्यन्त प्राचीनकाल से प्रसिद्ध रहा है। यहाँ संक्षेप में इसके प्रसिद्ध और प्रमुख स्थानों का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

त्रिवेणी अथवा संगम : प्रयाग में गंगा और यमुना का पावन मिलन संगम के नाम से प्रसिद्ध है। ऐसी मान्यता है कि इस स्थान पर अन्तःसलिला सरस्वती नदी भी गुह्य रूप से आकर मिलती है। तीन नदियों के संगम के कारण इसे त्रिवेणी भी कहा जाता है। संगम के तट पर अगहन की पूर्णिमा से लेकर माघ की पूर्णिमा तक (जनवरी-फरवरी) प्रतिवर्ष मेला लगता है। यही मेला प्रति बारहवें वर्ष कुम्भ और प्रति छठे वर्ष अर्द्धकुम्भ कहलाता है। इस मेले में कई स्नान-पर्व होते हैं। मुख्य पर्व माघ मास की अमावस्या को होता है। देश के कोने-कोने से लाखों यात्री, साधु-सन्त यहाँ एकत्र होते हैं, भजन-कीर्तन, 'कल्पवास' करते हैं। कन्नौज-सम्राट हर्षवर्द्धन प्रति पाँचवें वर्ष इसी मेले में आकर दान-पुण्य किया करता था। अब तो हज़ारों की संख्या में विदेशी भक्त, पर्यटक तथा पत्रकार भी इसी मेले का आनन्द लेने के लिए आते हैं।

अक्षयवट : संगम के निकट प्रसिद्ध अक्षयवट है। इस वट वृक्ष में कभी किसी ने पतझर नहीं देखा है। इसीलिए इसका नाम अक्षयवट पड़ा। इस समय यह पवित्र वृक्ष अकबर के बनवाए क़िले के भीतर है।

पातालपुरी : किले के पूर्वी द्वार के निकट धरातल के नीचे तहखाने में कई पत्थर की मूर्तियों को स्थापित किया गया है। यहीं अक्षयवट की एक शाखा भी रोपित की गई है। ऐसा जान पड़ता है कि क़िले के निर्माण से अक्षयवट और उसके समीप स्थित मंदिरों की मूर्तियों को यहाँ एकत्र कर दिया गया है ताकि प्रयाग आने वाले यात्री इनके दर्शन का लाभ उठा सकें।

क़िला : क़िले का निर्माण अकबर ने सन् 1583 ई० में प्रारम्भ करवाया था। इसका निर्माण 45 वर्षों में पूरा हुआ और इसके निर्माण में 6 करोड़ 17 लाख 20

हज़ार 214 रुपये खर्च हुए थे। इस किले में 23 महल, 3 ख्वाबगाह (शयनागार) और झरोखे, 25 दरवाज़े, 23 बुर्ज, 277 भवन, 176 कोठरियाँ, 2 खासोआम, 77 तहखानें, 20 तबेले, 1 बावली, 5 कुएँ और 1 यमुना नहर थी। आगे चलकर अंग्रेज़ों ने इस क़िले को अपनी छावनी बना ली। इस समय भी क़िले पर भारतीय सेना का अधिकार है।

बड़े हनुमान जी : क़िले के निकट पृथ्वी के नीचे हनुमानजी की एक लेटी हुई विशाल प्रतिमा है। कहते हैं कि क़िले के निर्माण के समय अकबर ने इस मूर्ति को उस स्थान से हटाना चाहा था। हटाते समय मूर्ति लेट गई और फिर किसी प्रकार उठाए न उठी।

शंकर विमान मण्डपम् : संगम के निकट काँचीपुरी के शंकराचार्य ने एक भव्य मंदिर का निर्माण अभी हाल ही में करवाया है। दक्षिण भारतीय शैली में बने इस मंदिर की प्राण-प्रतिष्ठा करने के लिए काँची के वर्तमान शंकराचार्य श्री जयेन्द्र स्वामी स्वयं प्रयाग पधारे थे। प्रयाग का यह एक दर्शनीय मन्दिर है।

अन्य मन्दिर : संगम से थोड़ी दूर पूर्व में दारागंज मोहल्ले में गंगा तट पर **नाग-वासुकि मन्दिर** है जिसका निर्माण 19वीं शती में नागपुर के महाराजा भोंसले ने करवाया था। दारागंज में ही **वेणीमाधव मन्दिर** भी प्रसिद्ध धार्मिक स्थान माना जाता है। संगम से उत्तर की ओर **अलोपीदेवी** का भव्य मन्दिर है। इस मन्दिर में नगर भर की स्त्रियाँ देवी-पूजा के निमित्त आती हैं। संगम से हटकर सिविल लाइन्स में नया बनवाया गया **हनुमत निकेतन** विशाल प्रांगण में स्थित है। इसके अंतर्गत हनुमान मन्दिर, शिव मन्दिर, पुस्तकालय, अतिथिगृह तथा व्यायामशाला आदि भवन हैं। हनुमान मन्दिर में प्रति मंगलवार को दर्शनार्थियों की भारी भीड़ जुड़ती है।

हंसतीर्थ : हंसतीर्थ गंगा के दक्षिणी तट पर योग-साधना का एक शक्तिपीठ है। योग-साधना से कुण्डलिनी जाग्रत की जाती है जो ऊपर उठकर मस्तिष्क (ब्रह्माण्ड) में प्रवेश करती है। योग-साधना में प्रयुक्त शरीर के विभिन्न अंगों का विधिवत् विश्लेषण हंसतीर्थ में किया गया है। हंसतीर्थ एक पान (हृदय) की पत्ती के आकार में घिरी चहार-दीवारी के भीतर विभिन्न भवनों का समूह है जो गुदा, उदर, नाभि, हृदय, कण्ठ, नासिका, कर्ण, नेत्र तथा मस्तिष्क के प्रतिरूप निर्मित किए गए हैं। योग-साधना के माध्यम से जीव हंसगति (मुक्ति) को प्राप्त होता है। इसीलिए इस भवन-समूह का नाम हंसतीर्थ पड़ा। इसके स्थित हंसकूप और सावित्रीवट भी पवित्र माने जाते हैं।

भरद्वाज आश्रम : विज्ञान परिषद् के निकट पूरब की ओर आनन्द भवन के निकट भरद्वाज आश्रम है। इस स्थान पर एक छोटा मंदिर है जिसमें भरद्वाज मुनि की प्रतिमा स्थापित है। कहते हैं जब राम से मिलने भरत वन को गए थे तब भरद्वाज आश्रम में वे अपनी सेना समेत ठहरे थे और भरद्वाज ने उनका यथोचित आदर-सत्कार किया था। अभी कुछ वर्ष पहले प्रो० बी० बी० लाल ने भरद्वाज आश्रम का पुरातात्त्विक उत्खनन करवाया था, किन्तु वहाँ से कोई महत्त्वपूर्ण सामग्री उपलब्ध नहीं हुई है।

खुशरूबाग़ : चौक मोहल्ले की पश्चिम दिशा में जी० टी० रोड पर खुशरूबाग़ स्थित है। इसके चारों ओर ऊँची किलेनुमा चहारदीवारी है। इसके दक्षिणी फाटक के ऊपर एक लेख है जिसके आधार पर इसका निर्माण सन् 1605 ई० में हुआ था। खुशरूबाग़ में चार मुख्य इमारतें हैं। एक एकमंजिला गुम्बददार मकबारा है जिसके भीतर अकबर के प्यारे बेटे खुशरू की कब्र है। पश्चिम की ओर एक दोमंजिला मकबरा है। इसमें खुशरू की बहन सुल्तानुन्निसा ने अपने जीवनकाल में अपनी कब्र बनवाई थी। परन्तु यह कब्र खाली है। मरने के बाद सुल्तानुन्निसा का शव सिकन्दरा में अकबर के समीप दफ़नाया गया था। इस भवन का निर्माण 1625 से 1632 ई० के बीच हुआ था। तीसरी इमारत तीन मंज़िल की है। इसमें खुशरू की माँ दफनाई गई थी। ये तीनों इमारतें पास पास हैं। इनसे हटकर पश्चिम की ओर एक चौथी दोमंज़िली इमारत है जिसमें कोई कब्र नहीं है। इसे तंबोली बेगम (तंबोली=इस्तंम्बोली=टर्किश सुल्ताना) का महल कहते हैं। सन् 1891 ई० में इस बाग के आधे भाग में वाटरवर्क्स के बड़े-बड़े जलाशय बनाए गए और शेष में अमरूद के पेड़ जो आज भी यथावत् हैं।

अशोक की लाट : क़िले के भीतर मौर्य सम्राट अशोक द्वारा बनवाया गया वह स्तंभ है जिसे उसने अपने शासनकाल में (तृतीय शती ई० पू०) कौशाम्बी में स्थापित करवाया था तथा जिस पर उसने अपने शासनादेश तथा धर्मलेख खुदवाए थे। कहते हैं कि जब क़िले पर अंग्रेज़ों ने अधिकार किया तब यह किले के बाहर पड़ा था जिसे अंग्रेज़ों ने सन् 1838 ई० में पुनर्स्थापित करवाया। इस स्तंभ के ऊपर जो शीर्ष था वह अब उपलब्ध नहीं है, परन्तु उस शीर्ष का अधोभाग इलाहाबाद संग्रहालय में है।

अशोक के इस स्तंभ पर कई अभिलेख हैं, 6 अशोक के धर्मलेख '1 अशोक का शासनादेश, 1 अशोक की छोटी रानी का अभिलेख, 1 समुद्र गुप्त का अभिलेख, 1 बीरबल का अभिलेख तथा 1 जहाँगीर का अभिलेख है।

चन्द्रशेखर आज़ाद पार्क : विज्ञान परिषद् के ठीक सामने सड़क के दूसरी ओर चन्द्रशेखर आज़ाद-पार्क है। इस पार्क का पुराना नाम अल्फ्रेड पार्क है। सन् 1870 ई० में सम्राट जार्ज पंचम के चचा अल्फ्रेड ड्यूक ऑव एडिनबरा भारत आये थे। सर विलियम म्योर उस समय इस प्रान्त के लेफ्टिनेण्ट गवर्नर थे। उन्होंने ड्यूक को प्रयाग में आमंत्रित किया और इस अवसर की स्मृति-स्वरूप उनसे इस पार्क की नींव डलवाई। इसे कम्पनीबाग़ भी कहा जाता था। इसी अल्फ्रेड पार्क में क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आजाद अंग्रेज़ों की गोली के शिकार हुए थे। इसीलिए देश के आज़ाद हो जाने के बाद इस पार्क का नाम चन्द्रशेखर आज़ाद पार्क रख दिया गया। इस समय इस पार्क में चन्द्रशेखर आज़ाद की प्रतिमा भी स्थापित है। इस विशाल पार्क की परिधि में गंगानाथ झा केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, राजकीय पब्लिक लाइब्रेरी, इलाहाबाद संग्रहालय, तथा मदनमोहन मालवीय स्टेडियम आदि भवन स्थापित हैं।

इलाहाबाद संग्रहालय : चन्द्रशेखर आजाद पार्क में एक अत्यन्त भव्य और विशाल भवन में इलाहाबाद संग्रहालय स्थित है। इसमें मौर्य-शुंग काल से लेकर आधुनिक काल

तक की प्राचीन मूर्तियाँ, मृण्मूर्तियाँ, वस्तुखण्ड, धातुपात्र, लघुचित्र तथा अस्त्र-शस्त्र संग्रहीत हैं। इस संग्रहालय के प्रमुख आकर्षण हैं चन्द्रशेखर आज़ाद की 'माउजर' नामक प्रसिद्ध पिस्तौल, पंडित जवाहरलाल नेहरू को देश-विदेश से प्राप्त उपहार सामग्री, सुमित्रानन्दन पंत की पाण्डुलिपियाँ, आदि। पहले यह संग्रहालय इलाहाबाद नगर महापालिका के संरक्षण में था। परन्तु पिछले डेढ़ दो वर्षों से इसका प्रबन्ध केन्द्रीय सरकार के अधीन हो गया है।

स्वराज भवन : पंडित मोतीलाल नेहरू का बनवाया हुआ विशाल भवन जिसको पहले आनन्द भवन कहा जाता था। किन्तु जब उन्होंने महात्मा गाँधी के प्रभाव से इस भवन को काँग्रेस को दे दिया तबसे इसका नाम स्वराज भवन पड़ गया। देश की आजादी के पहले देश के मूर्धन्य नेताओं की महत्त्वपूर्ण गतिविधियों का प्रमुख केन्द्र था। आजकल इसमें एक जवाहर बाल विद्यालय तथा एक कला-विद्यालय संचालित है।

आनन्द भवन : स्वराज भवन को जब मोतीलाल नेहरू ने काँग्रेस को दे दिया तब उन्होंने अपने लाड़ले बेटे जवाहरलाल नेहरू के लिए एक नया आनन्द भवन बनवाया। सन् 1976 ई० में श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने आनन्द भवन को भी नेहरू मेमोरियल को दान कर दिया जो आज नेहरू स्मारक के रूप में दर्शनीय है।

नेहरू प्लेनेटोरियम : आनन्द भवन के पिछवाड़े सन् 1980 ई० में नेहरू प्लेनेटोरियम का उद्घाटन श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने किया था। इसमें आकाश एवं उसमें स्थित नक्षत्रों की स्थितियों का ज्ञान कराया जाता है।

विश्वविद्यालय : म्योर सेण्ट्रल कालेज के स्थान पर सन् 1887 ई० में इलाहाबाद यूनीवर्सिटी की स्थापना की गई थी। इस समय इलाहाबाद विश्वविद्यालय तीन विभिन्न परिसरों में विस्तृत है। इसका प्रमुख परिसर आनन्द भवन और प्रयाग स्टेशन के बीच में है। इस परिसर में **सिनेट भवन** बीसवीं शती ई० के प्रारम्भ की वास्तुकला का एक अद्भुत नमूना है। इस भवन में विश्वविद्यालय के मुख्य कार्यालय हैं। यह परिसर कला संकाय के विभिन्न विभागों से संकुल हैं। इसके पूर्व में म्योर सेण्ट्रल कालेज में विज्ञान संकाय के विभिन्न विभाग स्थापित हैं। इस परिसर का सर्वाधिक आकर्षक भवन महाराजा विजयानगरम् द्वारा बनवाया गया **विजयानगरम् हॉल** है। इस भवन के विशाल हॉल के ऊपर रंगीन टाइलों से सज्जित गोल गुम्बद और ऊँची मीनार दर्शनीय है। सिनेट भवन के पश्चिम में चैथम लाइन्स पर विश्वविद्यालय का तीसरा परिसर है जिसमें वाणिज्य संकाय तथा विधि संकाय स्थित हैं। इसी परिसर के निकट **गाँधी भवन** है, जिसमें गाँधी-दर्शन-सम्बन्धी अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है।

अन्य शैक्षणिक एवं शोध संस्थाएँ

1. शीलाधर शोध संस्थान, 2. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 3. भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, 4. मत्स्य अनुसंधान केन्द्र 5. हिन्दुस्तानी एकेडेमी आदि।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
के उत्कृष्ट प्रकाशन

1.	परमाणु विखण्डन	डा० रमेश चन्द्र कपूर	9-00
2.	द्रव्य के गुण	डा० डी० बी० देवधर	8-00
3.	ध्वनि और कम्पन	" अरविन्द मोहन	19-00
4.	अकार्बनिक रसायन	" हीरालाल निगम	14-00
5.	प्रयोगिक रसायन	महीपाल गुप्त	12-00
6.	प्रकाश रसायन	डा० हीरालाल निगम	11-00
7.	भारतीय औषधियाँ	" संकटा प्रसाद	27-00
8.	अम्ल और क्षारक	" डा० ए० वी० दीक्षित	8-00
9.	विटामिन रसायन	" सुरेश चन्द्र बहल	15-00
10.	परमाणु संचरना	डा० अमर नाथ द्विवेदी	12-50
11.	भारी हाइड्रोजन	" शुभ लक्ष्मी	10-25
12.	मुक्त मूलक	" सोम प्रकाश	10-00
13.	बोरान और उसके यौगिक	आदित्य गोपाल झिंगरन	14-00
14.	उच्च बहुलक	डा० श्रीमती कृष्णा मिश्र	11-50
15.	फास्फेट	" शिवगोपाल मिश्र	15-00
16.	सूक्ष्म मात्रिक तत्व	" " "	15-00
17.	विद्युत के सिद्धान्त	अनु० हरिचन्द्र खरे	26-50
18.	प्रकाश और वर्ण	अनु० भगवती प्रसाद श्रीवास्तव	11-50
19.	भौतिक विज्ञान में क्रान्ति	अनु० डा० निहाल करण सेठी	4-50
20.	इलेक्ट्रानिकी परिचय	प्रो० राम कुमार रस्तोगी	44-00

इनके अतिरिक्त ज्ञान-विज्ञान एवं अन्य विषयों पर 500 से अधिक ग्रन्थ उपलब्ध, सुन्दर छपाई, आकर्षक गेट-अप, मूल्य अत्यन्त ही कम, सूची-पत्र निःशुल्क।

सम्पर्क सूत्र
निदेशक
उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
महात्मा गाँधी मार्ग, लखनऊ